विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ

तटवर्ती वीर राघवराव

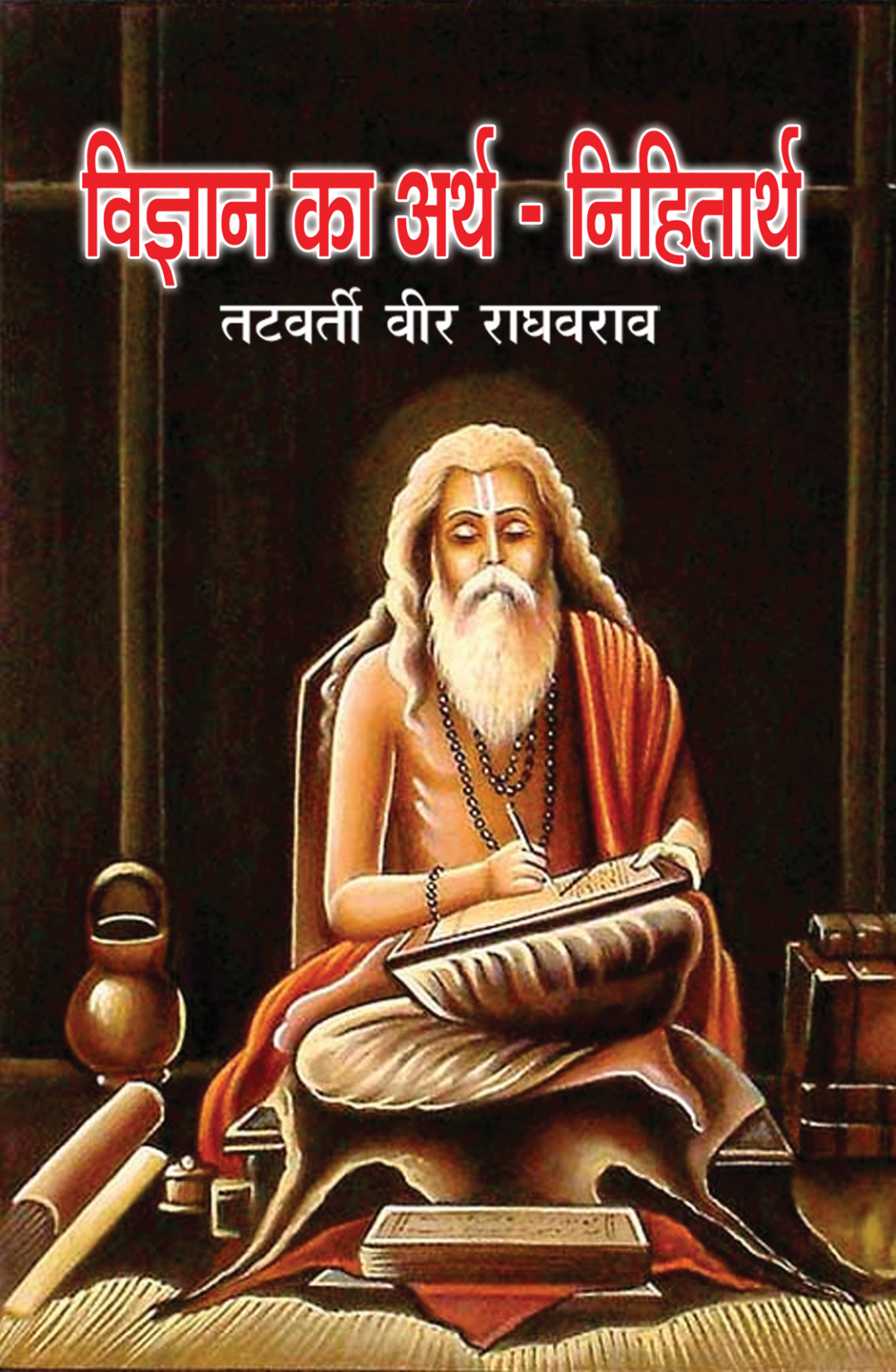

विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ

लेखक : श्री तटवर्ती वीर राघवराव

हिन्दी अनुवादः श्रीमति एन.अन्नपूर्णा

For Books Please Contact :
TATAVARTHI VEERA RAGHAVARAO
Tatavarivari Street, BHIMAVARAM-534201.
W.G.Dist., A.P. Ph: 94403 09812

Rs.120/-

विषय सूची

विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ 3

- पुण्य क्या है? 7

- उपवास 9

- मौन 14

- जागरण 15

- पूजा 19

- स्त्रोत 24

- जप 28

- ईश्वर कौन है? 29

- भगवान कहाँ है? 32

भगवान तक कैसे पहुंचे? 38

- मंदिर क्यों? 44

- स्नान 53

- प्रदक्षिण 54

- साष्टांग प्रणाम, शठगोपा 55

- प्रसाद 62

- हुंडी में उपहार 67

- केश खंडन 68

- अखंड दीपम मंदिर की घंटी 69

मंत्र पुष्प अर्थ 72

विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ

संसार में अनेक विज्ञान हैं। लगभग हर कोई विज्ञान को मानक में लेता है। यह किसी भी विज्ञान के अनुसार किया जाता है। जब कोई कुछ करता है तो वयस्क उसे पूछते हैं - क्या वैज्ञानिक ढंग से करते हैं? वे यह भी कहते हैं कि वैज्ञानिक तरीके से करें। यानी, वे हमसे कह रहे हैं कि ऐसा करें जैसा कि विज्ञान में है। कुछ लोग जब कोई शंका करते हैं, जब कोई काम करना चाहते हैं तो ब्रह्मण और विद्वान से पूछते हैं कि शास्त्रों में क्या रखा है? फिर वे वही करते हैं जो किताबें उन्हें करने के लिए कहती हैं।

इसके अलावा, जब मंदिर बनाए जाते हैं, तो गोपुर बनाए जाते हैं, मूर्तियाँ खड़ी की जाती हैं, तो मंदिर से संबंधित जो कुछ भी होता है वह 'अगम शास्त्र' के अनुसार बनाया जाता है। परिवर्तन और परिवर्धन भी किए जाते हैं। यदि ऐसा कहा जाए, तो शास्त्रों का महत्व देखा जा सकता है। सब कुछ शास्त्रों और पुराणों का पालन करता है। लेकिन उन पर विचार करने वाले, अध्ययन करने वाले बहुत कम हैं। लेकिन जो उनका पालन करते हैं उन्हें अवश्य सोचना चाहिए। क्योंकि कितने शास्त्र हैं? ये शास्त्र किसने लिखे? लिखने वालों का स्तर क्या है? उन्होंने वह शास्त्र क्यों लिखा? उन्हें क्या अपेक्षा थी? वे उस शास्त्र के माध्यम से लोगों और आने वाली पीढ़ियों को क्या बताना चाहते थे? उस विज्ञान का अनुसरण करने पर आपको किस प्रकार के परिणाम मिलते हैं? क्या वे लोग जो इसका अनुसरण करते आ रहे हैं वर्षों से वांछित परिणाम मिल रहे हैं? या नहीं? उन्हें वांछित परिणाम क्यों नहीं मिल रहे हैं? क्या कारण है?

सोचने लायक कई बातें हैं।

साथ ही, क्या समय के साथ इन विज्ञानों में कोई बदलाव आया है? जब ये शास्त्र लिखे गए तो क्या परिस्थितियाँ थीं? तब समाज कैसा था? तब मनुष्य का जीवन जीने का तरीका कैसा था? क्या तब स्थितियाँ वर्तमान परिस्थितियों जैसी ही थीं? या फिर कोई बदलाव हुआ है?

क्या वर्तमान परिस्थितियों में लिखा गया विज्ञान उपयुक्त है? क्या यह आज मनुष्यों के जीने के तरीके के अनुकूल है? जैसे सब कुछ बदलता है, क्या विज्ञान को भी बदलने की ज़रूरत है? ऐसी बातों पर अध्ययन और विचार करने की जरूरत है।

क्योंकि इन विज्ञानों के लेखक विभिन्न स्तरों पर हैं। वे अपने स्तर के अनुसार लिखते हैं। साथ ही, तपस्वी ऋषियों और योगियों द्वारा लिखे गए शास्त्र बहुत ऊंचे हैं। क्या आम आदमी और विद्वान उन्हें समझ सकते हैं? यह कहा जा सकता है कि इसे निश्चित रूप से नहीं समझा जा सकता। इसलिए, जो लोग विज्ञान के बारे में बोलते और पढ़ाते हैं, वे अपने स्तर के आधार पर उतना ही समझा और सिखा सकते हैं, जितना वे समझते हैं। क्योंकि सभी योगियों ने किस अर्थ से कहा! किस कारण के लिए! क्या वे नहीं जानते? वे तब तक कह सकते हैं जब तक वे समझते हैं। वे इतने अच्छे नहीं जानते हैं कि यह कह सकें कि वे यही सही हैं। हमें यह समझना होगा कि इसका कारण यह है कि वे वही समझते हैं।

देखो चलो भगवान कृष्ण को ले चलते हैं। वह एक महान योगी हैं। आइए उस गीत को लें जिसका उन्होंने उपदेश दिया। भगवद गीता पर उनके द्वारा कई अलग-अलग तरीकों से टिप्पणी की गई है। जैसा कि आप देख सकते हैं, एक व्यक्ति द्वारा की गई व्याख्या और दूसरे द्वारा की गई व्याख्या के बीच निश्चित रूप से अंतर है। कुछ लोगों की टिप्पणियों की कोई प्रासंगिकता नहीं

है। इसके बारे में सोचो, अगर हर कोई एक ही अर्थ, स्पष्टीकरण और टिप्पणी दे, तो क्या इतनी सारी अलग-अलग भगवद गीता की आवश्यकता होगी? क्या वे वही हैं जो किसी और की लिखी हर बात का अनुसरण करते हैं? किसी और को विशेष रूप से लिखने की क्या आवश्यकता है? थोड़ा सोचो।

हाल ही में रूस में कुछ लोगों ने भगवद गीता पढ़ी और भगवान कृष्ण को आतंकवादी कहा। उन्होंने हिंसा को बढ़ावा दिया। इसलिए भगवत गीता को अदालत से प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।' वे इस पर तरह-तरह के कमेंट भी करते हैं। घटित और क्या ईश्वर सचमुच हिंसा को प्रोत्साहित करता है? क्या उन्होंने धर्म की रक्षा का प्रयास किया? यानि कि वे किससे कह सकें कि वे अपने स्तर के अनुसार समझते हैं। जिन पर वे अपना अधिकार भी बताते हैं। कौन सही है? अर्थात संसार में कहा गया है कि जितना समझ सको उतना ही उचित है। जिससे वे कहते हैं कि, जो वह कहता है वह ठीक है। जो वह जानता है वही ठीक है। और जो वह करता है वही ठीक है।

सोचो । यदि वह जो करता है वह सही है तो दूसरे उसे स्वीकार क्यों नहीं करते? वास्तव में क्या सही है? यानी जो जिस स्तर का है, उसके लिए वही सही है। लेकिन अगर उनका स्तर बदलेगा तो उनकी राय भी बदल जायेगी। क्योंकि संसार में सभी मनुष्य एक स्तर पर नहीं हैं। हर एक अलग स्तर पर है। क्योंकि मनुष्यों में ऐसे लोग भी हैं जो शारीरिक अवस्था में हैं। ऐसे लोग हैं जो मानसिक स्थिति में हैं। ऐसे लोग हैं जो बुद्धि स्थिति में हैं। आत्मा की अवस्था में रहने वाले भी होते हैं। इसलिए, जो लोग भौतिक अवस्था में हैं उनके कर्म उन लोगों के कर्मों के समान नहीं हैं जो आत्मा की अवस्था में हैं। इसके अलावा, जो लोग बुद्धि स्थिति में हैं उनके कार्य और जो लोग मानसिक स्थिति में हैं, उनके कार्य और समझ एक समान नहीं हैं।

क्योंकि भौतिक दृष्टि से मनुष्य सभी एक समान हैं। लेकिन मनो स्थिति

में कई अंतर होते हैं। मनुष्य का व्यवहार मन पर निर्भर करता है। भगवत गीता में भगवान कृष्ण ने भी यही कहा है। उन्होंने कहा कि संसार में मनुष्य में चार प्रकार के गुण होते हैं। वे हैं (1) तमोगुण, (2) रजो गुण, (3) सात्विक गुण, (4) निर्गुण। इसलिए हर कोई भी उनकी गुणवत्ता के अनुसार उनका व्यवहार, उनकी समझ पर निर्भर करता है। तो वह ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है? किसी और के लिए सवाल करना और सोचना पर्याप्त नहीं है। कारण यह है कि वे अपनी गुणवत्ता एवं स्तर के अनुरूप आचरण करते हैं। इसलिए ब्रह्मर्षि पात्रीजी कहते है कि किसी की निंदा नहीं करनी चाहिए। किसी को जर्ज मत करो।

इन चार प्रकार के गुणों वाले लोग हमें रामायण में भी मिलते हैं। तमोगुण में कुम्भकर्ण, रजोगुण में रावणासुर, सात्विकगुण में विभीषण और निर्गुण में श्री रामचन्द्र को हम देख सकते हैं। इस प्रकार किसी के व्यवहार का दूसरे के व्यवहार से कोई संबंध नहीं है। इसका कारण उनके गुण हैं। कुंभ कर्ण राम जैसा क्यों नहीं है? ऐसा कौन कह सकता है? कौन कह सकता है कि रावणासुर विभीषण की तरह क्यों नहीं सोचता? क्योंकि हर चीज़ को शरीर पर लगाया जा सकता है। आत्मा पर लगाया जा सकता है। इसे शरीर पर लगाने से एक तरह का एहसास होता है। आत्मा पर लागू करने पर एक और अर्थ सामने आता है।

उदाहरण के लिए, जब भगवान कृष्ण ने कहा, मेरी शरण में आओ, तो लोग ने उसे शरीर समझ लिया। वे मूर्ति की शरण लेते हैं और उसकी पूजा करते हैं। जो लोग उसे 'आत्मा' समझते हैं वे उसकी शरण लेते हैं और 'आत्मा' का ध्यान करते हैं। भगवान श्रीकृष्ण द्वारा कहे गए एक ही शब्द के कई अर्थ निकाले जा सकते हैं। लेकिन भगवान कृष्ण आत्मा की अवस्था में हैं, उन्होंने आत्मा की अवस्था में बात की। साथ ही इन विज्ञानों को उनके स्तर के आधार पर अलग-अलग अर्थ भी दिए जाते हैं। तो आइए इन विज्ञानों के अर्थ का विश्लेषण करें।

पुण्य क्या है?

"पुण्य" शब्द शास्त्रों में अधिक बार आता है। बड़े-बुज़ुर्ग, विद्वान और गुरु दुनिया को बहुत सी बातें सिखाते हैं वे कहते है - वो काम करो तो तुम्हें पुण्य मिलेगा, अन्यथा ये काम करो और तुम्हें पुण्य मिलेगा। विज्ञान पढ़ने और पढ़ाने वाले भी यही कहते हैं। अच्छा करो, नेकी करो, पूजा - पाठ करो। वे कहते हैं कि सेवा करने से पुण्य मिलेगा। जब कोई पुण्य कहता है तो वे तुरंत वह करना चाहते हैं। यदि पुण्य आता है तो कोई उस कार्य को करने को अधिक महत्व देता है। ऐसी भी कई चीजें हैं जो योग्यता लाने के लिए की जा सकती हैं। वे सब कुछ पुण्य के रूप में कर रहे हैं लेकिन इसके बारे में नहीं सोच रहे हैं। लेकिन सोचने की जरूरत है।

वास्तविक पुण्य क्या है? पुण्य क्या लाता है? कब आयेगा इसकी कीमत कितनी होती है? ऐसा कोई नहीं सोचता । लेकिन सभी की धारणा यही है कि उन्हें नहीं पता कि 'पुण्य' करने से क्या होगा ? लेकिन उनका मानना है कि कुछ अच्छा होगा। इसके अलावा, यह माना जाता है कि जैसे-जैसे कोई व्यक्ति ऐसे काम करता है, 'पुण्य' बढ़ता है, और उसके कारण वह जीवन में अमीर बन सकता है, महान बन सकता है, उसकी इच्छाएं पूरी होंगी और सभी कठिनाइयां दूर हो जाएंगी। ऐसे भी लोग हैं जो सोचते हैं कि पाप भी मिट जायेंगे। इसलिए जो भी लाभ चाहता है, वे उस कार्य को 'पुण्य' मानकर करते हैं। लेकिन इसके बारे में नहीं सोच रहे हैं। क्योंकि बिना यह जाने कि 'पुण्य' क्या है...? व्यसका परिणाम क्या होगा ? उस तरह का काम जीवन में केवल निराशा ही छोड़ता है।

कारण यह है कि वे जो अपेक्षा करते हैं और चाहते हैं वह एक बात है, वे जो करते हैं उसका परिणाम दूसरा हो सकता है। तो फिर उन्हें वह नहीं

मिलता जो वे चाहते हैं? उम्मीदें कभी पूरी नहीं होतीं। अंत में निराशा हाथ लगी। इसलिए कोई भी कार्य जागरूकता के साथ करना चाहिए। इसे आँख मूँद कर मत करो। तो आइए सोचें कि हम 'सदाचार' के रूप में क्या करते हैं। आइये थोड़ा 'पुण्यम' के बारे में भी जान लें। याद रखें 'सदाचार' का मतलब कहीं ढेर के ऊपर बड़ा होना नहीं है। 'पुण्य' का अर्थ है, वह अच्छा जो हमारे साथ घटित होता है, वह लाभ जो हमें मिलता है। अर्थात हमारे जीवन में जो अच्छा होता है और जो लाभ हमें मिलता है उसे 'पुण्य' कहा जाता है। इसका मतलब है अपने जीवन में कुछ अच्छा करना! लाभ कमायें! वह कार्य पुण्य कार्य कहलाता है। इन्हें सत्कर्म कहा जाता है। एक तरह से, सेवा के सभी कार्य योग्यता के कार्य हैं।

लेकिन यहां हमें यह सोचना होगा कि 'पुण्य' करने से अच्छे परिणाम और लाभ होंगे। परन्तु सभी प्रकार के पवित्र कर्मों का एक ही प्रकार का कोई शुभ फल, कोई परिणाम, कोई लाभ नहीं होता। हम जैसा कर्म करते हैं, हमें वैसा ही फल मिलता है। अर्थात "लाभ" किये गये कार्य पर निर्भर करता है। इसे हमें बेहतर ढंग से समझने की जरूरत है। इसके अलावा, यदि आप कुछ करते हैं और 'पुण्य' के रूप में किसी चीज़ की आशा करते हैं, तो जब अपेक्षित परिणाम नहीं आता है, तो आपको निराशा ही हाथ लगती है। जो किया गया है वह व्यर्थ है। एक बार फिर याद रखें कि जितना अच्छा पुण्य किया जाएगा, उतना ही लाभ होगा।

पुण्य के बारे में कई लोगों की धारणा यह है कि यह पुण्य मृत्यु के बाद हमारे खाते में आएगा और अगले जन्म में हमें इसका अनुभव होगा। लेकिन चाहे वह पुण्य हो या पाप (पाप वह बुराई है जो हमारे साथ घटित होती है, वह हानि है जो हमें उठानी पड़ती है) अधिकांश समय हम इसे इसी जीवन में अनुभव करते हैं। केवल एक छोटा प्रतिशत ही बाद के जन्मों पर लागू होता है।

यदि हम थोड़ा गौर करें तो हमने जो किया है उसका परिणाम यहां भोगते है! यह ज्ञात होता है कि हम इसे तुरंत अनुभव करेंगे। तो सबसे पहले हम क्या परिणाम चाहते हैं? उस फल को पाने के लिए आपको यह जानना होगा कि किस प्रकार का पवित्र कार्य करना है? क्या करना चाहिए। अन्यथा यह बर्बाद हो जाएगा। कारण एक चीज़ जरूरत किया हैं, कुछ और है। अतः आइए देखें कि किसी 'पुण्य' को करने से जीवन में किस प्रकार के लाभ प्राप्त होंगे।

यदि आप किसी चीज का अर्थ जानकर अमल करते है, तो आपको खुशी मिलेगी। यदि आप अर्थ जाने बिना उस पर अमल करते है, तो आप परेशान हो जायेंगे।

उपवास

कुछ बुज़ुर्गों और विद्वानों का कहना है कि रोज़ा रखना एक नेक काम है। उन्हें शिवरात्रि जैसे त्योहारों पर उपवास करने के लिए कहा जाता है। यह भी कहा जाता है कि उस दिन उपवास करने से भगवान का ध्यान आकर्षित हो सकता है। जो लोग आज भी व्रत रखने में स्रचि रखते हैं वे प्रत्येक एकादशी का व्रत करते हैं। जो लोग अब भी हर शनिवार का व्रत करते हैं। यदि ऐसा है तो माना जा रहा है कि और भी अधिक योग्यता आएगी। इसलिए वे अपनी शक्ति के अनुसार उपवास कर रहे हैं। लेकिन लेकिन वे ये नहीं सोच रहे हैं कि व्रत रखने पुण्य क्या है? लाभ क्या है? तुम्हें यह पता होना चाहिए।

आइए सबसे पहले देखें कि वास्तव में उपवास क्या है? उपवास का मतलब है पेट यानी पाचन तंत्र को पूरा आराम देना। यानि उस दिन पेट भर कुछ भी नहीं खाना। इसे उपवास कहते हैं. लेकिन समय के साथ-साथ वे तेजी से मनमुताबिक बदलाव भी कर रहे हैं। क्योंकि कुछ लोग बिना ताजा पानी पिए भी सख्ती से उपवास करते हैं। कुछ लोग ताजे पानी के अलावा कुछ नहीं लेते।

कुछ लोग केवल दूध, छाछ और गुड़ जैसे तरल पदार्थ लेकर ही व्रत रखते हैं। कुछ लोग केवल फल खाते हैं। कुछ लोग खाना छोड़ देते हैं और नाश्ते के तौर पर टिफिन खाते हैं। इस तरह वे अपनी इच्छानुसार और मनचाहे तरीके से व्रत रखते हैं। लेकिन इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता, उन्हें लगता है कि हर चीज़ से ढेर सारा पुण्य मिलेगा। लेकिन वह किस प्रकार का पुण्य है? आपको कितना मिला? उस परिणाम का मतलब है कि आप उस लाभ का अनुभव कब करेंगे! वे यह नहीं जानते। न समझने के कारण, न सोचने के कारण ही उपवास इतना बदल गया है।

लेकिन याद रखें 'उपवास का अर्थ है पेट को पूरा आराम देना' पूर्ण आराम का मतलब है पेट में ताजा पानी भी न पीना। और ऐसा करने का पुण्य क्या है? लाभ क्या है? आइए उसके बारे में सोचें। देखिए, पेट में मौजूद 'पाचन तंत्र' हमारे द्वारा खाए गए भोजन को पचाता है और उसे ऊर्जा में परिवर्तित करता है और शरीर को कार्य करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है। यह पाचन तंत्र भी एक उपकरण की तरह है। ज्यादा इस्तेमाल करने पर यह जल्दी खराब हो जाता है। यदि आप कार को बिना रुके मोड़ते हैं, अधिक वजन डालते हैं या अलग ईंधन का उपयोग करते हैं, तो यह जल्दी ही एक छेद में चली जाएगी। यानी इंजन ख़राब हो जायेगा। लेकिन अगर आप बीच में कुछ घंटे रुकेंगे तो यह लंबे समय तक काम करेगा।

और हमारा पेट भी वैसा ही है। कई लोग पेट को आराम दिए बिना भोजन के बीच कुछ खाना खाते हैं। यानी उस वक्त भी पेट को आराम नहीं करने दिया जाता। वे ऐसे ही काम करते रहते हैं। वे खाना तो जानते हैं, लेकिन यह नहीं समझते कि खाने के बाद अंदर के पाचन तंत्र को कितना काम करना पड़ता है। वे हमेशा स्वाद और पदार्थ को महत्व देते हैं। लेकिन पेट के बारे में नहीं सोचते। यदि स्वाद अच्छा हो तो कुछ लोग इसे और भी अधिक खाते हैं। वो वैसे ही खा रहे हैं, लेकिन फिर ये नहीं सोचते कि ये उनके पेट पर कितना

भारी पड़ रहा है। फिर भी कुछ लोग शाकाहारियों से बने मानव शरीर में मांस डालते हैं। क्या यह पाचन तंत्र को नुकसान पहुंचाता है? या स्वास्थ्य को नुकसान? चलो एक कार ले लो। प्रत्येक कार और उनका इंजन प्रत्येक ईंधन के अनुसार बनाया जाता है। इसका मतलब है कि कुछ कारों के इंजन पेट्रोल से चलने के लिए बनाए जाते हैं। इसके अलावा कुछ कारों के इंजन डीजल के अनुरूप बनाए जाते हैं। ऐसे ईंधन वाली कोई भी कार का इंजन ठीक से और लंबे समय तक चलेगा।

लेकिन अगर पेट्रोल कार में डीजल डाला जाए तो इंजन जल्दी खराब हो जाता है। बोरू आता है. इसके अलावा, मानव पाचन तंत्र शाकाहारियों के लिए अनुकूलित है। लेकिन मांसाहारियों के लिए नहीं। यही कारण है कि प्राकृतिक चिकित्सक मंटेना सत्यनारायणराजुगारू स्पष्ट रूप से कहते हैं। मनुष्य को प्राकृतिक भोजन करना चाहिए। कहा जाता है कि प्रकृति के विरुद्ध मांस नहीं खाना चाहिए। यदि वह सारा शाकाहारी भोजन खाये तो वह दो घंटे में पच जायेगा। कहा जाता है कि मांस को खाने में छह से सात घंटे लग जाते हैं।

ध्यान दें कि एक इंसान बाघ या शेर की तरह कितने दिनों तक केवल कच्चा मांस खा सकता है? लेकिन वह अपना पूरा जीवन केवल शाकाहारी भोजन लेकर जी सकता है। इसलिए जिस प्रकार पेट्रोल कार में मिट्टी का तेल डालेंगे तो इंजन जल्दी खराब हो जाएगा, उसी प्रकार मानव शरीर में मांस डाल देंगे तो मानव पाचन तंत्र भी जल्दी खराब हो जाएगा। यानी अपच, पेट दर्द, कब्ज, अल्सर, गैस्ट्रिक दर्द जैसी समस्याएं आ रही हैं। हम जो जवान हैं, मांस खा रहे हैं। लेकिन उनका कहना है कि हमें ऐसी कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन याद रखें कि अगर आप नई पेट्रोल कार में मिट्टी का तेल भी डालेंगे तो वह तुरंत तुरंत खराब नहीं हो जाएगी? मरम्मत के लिए नहीं आएगी? इसी प्रकार यदि मनुष्य के शरीर में मांस डाल दिया जाये तो मनुष्य का शरीर तुरन्त नष्ट नहीं होगा। लेकिन अगर यह क्षतिग्रस्त है, तो यह सब परेशानी है। इसलिए

डाइट करने वाले को इन सभी बातों के बारे में सोचना चाहिए। इसके अलावा, आंख मूंदकर न खाएं।

क्योंकि इंसानों का व्यवहार ही ऐसा है, ऋषि-मुनियों और पुराने विचार वाले महापुरुषों ने कहा कि इन मूर्ख इंसानों को क्या कहें! कैसे कहें! बिना जाने उनकी एकमात्र कमजोरी पुण्यम शब्द का उपयोग करते हुए, दृढ विश्वास से कहते हैं कि यदि आप उपवास करेंगे तो पुण्य मिलेगा। जब तक तुम जीवित हो, तबतक पाचन की शक्ति बढने का उपाय किया। उन्हें जीवन भर स्वस्थ रहने के लिए तैयार किया गया। वे जानते हैं कि जब तक वे 'पुण्यम' नहीं कहेंगे, वे नहीं सुनेंगे। तो पता करो। बीच में रोजा रखना 'पुण्य' यानी लाभ है। पाचन तंत्र ठीक रहता है। इसका मतलब है कि यह अच्छा काम करता है। इसका मतलब है कि आप जो खाते हैं उसका सेवन करके स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। यही वह 'पुण्य' है जो उपवास में आता है। जानिए 'उपवास से पुण्य आता है, स्वास्थ्य लाभ होता और कुछ नहीं है। तो एक बात और जानें। हम जो करते हैं उसका प्रतिफल लाभ हो सकता है या हानि हो सकती है। हम स्वयं इसका अनुभव करते हैं। यह इस पर निर्भर करता है कि क्या किया जाता है। इसलिए, "पुण्य" इस बात पे निर्भर करता हैकि हम क्या करते हैं?

इसीलिए पत्रीजी कहते हैं। इस सृष्टि में ऐसे कई गुण हैं जिनका मनुष्य को पालन करना चाहिए। 'शरीरा धर्म' उनमें से एक है। शरीर को किस प्रकार का भोजन देना चाहिए? कितना देना है? कितनी बार देना है? वह भोजन कैसा होना चाहिए? वे बहुत सी बातें कहते हैं। पत्रीजी को विशेषकर मांस पसंद नहीं है। इसे हल्का शाकाहारी भोजन लेना कहते हैं। यह भी कहा जाता है कि इसे संयमित मात्रा में लिया जाना चाहिए। ताजा पानी अधिक पियें। इसके अलावा, हम जो खाना खाते हैं वह उचित होना चाहिए।

इसके अलावा, खाया गया भोजन भूख और रजोगुण को बढ़ाने वाला नहीं होना चाहिए। ऐसा कहा जाता है कि इससे सात्विक गुण बढाने वाला होना

चाहिए। कहा जाता है कि खासतौर पर शाकाहारी भोजन में लहसुन का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसके अलावा, वे ठंडा, ख़त्म, किण्वित, खराब, बदबूदार, पका हुआ और फ्रिज में रखा हुआ खाना नहीं खाना चाहिए। इसके अलावा, थोड़ी सी दागदार, सड़ी-गली, दागदार सब्जियों और फलों का उपयोग नहीं करना चाहिए। अगर हम खाने में कुछ नियमों का पालन करें और बीच-बीच में उपवास भी करें तो बहुत स्वस्थ रहेंगे। जो सौम्य होते हैं वे सभी सोच सकते हैं, अच्छे-बुरे का निर्णय करने में सक्षमहोते हैं। अच्छे से सोचेते हैं। वे अच्छे काम करते हैं, उनको जीवन में अच्छे परिणाम मिलेंगे।

पत्रीजी और ये कहते हैं कि इस सृष्टि में सब कुछ भगवान का रूप है, इसलिए हम जो पानी पीते हैं और जो खाना खाते हैं उसे भगवान का रूप माना जाता है। भोजन के प्रति हमारा व्यवहार उसी भावना के अनुरूप होना चाहिए। तभी तो बुजुर्गों ने कहा 'चावल परब्र्म स्वरूपम'। अर्थात हम जो भोजन करते हैं वह भी भगवान का रूप है। अतः केवल दैवीय स्वरूप होना ही पर्याप्त नहीं है, हमारा आचरण भी उसके अनुरूप होना चाहिए। भोजन का सम्मान करना चाहिए। इसलिए वे पीने का पानी फर्श पर और कुर्सी पर बैठकर पात्रीजी के पैरों के पास नहीं रखने देते थे। जब वह खाना खाता है तो उसे कम परोसा जाता है। कहा जाता है कि जो भोजन खाया जाता है वह आनंद से खाया जाता है। अनिच्छा से और कठिनाई से न खायें। खाना बर्बाद नहीं करना चाहिए। इसलिए हमे थोड़ी परोसा जाना चाहिए। साथ ही किसी से जबरदस्ती न करें। उन्हें जबरदस्ती खाना खिला कर उनके लिए कठिनाई पैदा मत करो। इसलिए खान-पान के मामले में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए।

नदियों के जल को भगवान मानकर हारति देना पर्याप्त नहीं है। खाने से पहले यह प्रार्थना करना पर्याप्त नहीं है कि चावल परब्र्म का अवतार है। भोजन के प्रति हमारा व्यवहार वैसा ही होना चाहिए। तभी हमारे लिए 'लाभ' का मतलब 'पुण्य' है।

मौन

मौन को भी सदाचार कहा गया है। इसलिए, बीच में कुछ लोग सप्ताह या महीने में एक दिन, कुछ सप्ताह में, कुछ एक महीने में, कुछ कुछ महीनों में, और महान लोग अपने जीवन की पूरी अवधि के लिए मौन में रहते हैं। इसलिए आइए देखें कि मौन का गुण क्या है? यानी देखें कि लाभ क्या है? मौन का अर्थ है 'मुँह को आराम देना, कुछ न कहना'। जानिए (1) पेट को आराम देने को 'उपवास' कहते हैं। (2) मुख को आराम देना 'मौन' कहलाता है। विशेष रूप से, हम जो कुछ भी करते हैं, चाहे हम अपनी आंखों से देखते हैं, अपने कानों से सुनते हैं, अपने हाथों और पैरों से काम करते हैं, और अंत में अपने मुंह से बोलते हैं, हमारी कुछ ऊर्जा खर्च होती है। इसलिए 'मौन' रहने से हमारी बहुत सारी ऊर्जा बचती है। इसलिए ऊर्जा बचाना ऊर्जा बढ़ाने जैसा है। आज विश्व में मनुष्य की इतनी खराब स्थिति होने का मुख्य कारण ऊर्जा की कमी है। शक्ति की कुल हानि। इसलिए कोई भी छोटी सी कठिनाई आने पर वे तुरंत हाथ उठाकर उन्हें बचाने और उनकी रक्षा करने की प्रार्थना करते हैं। इसलिए मौन रहने से बहुत सारी ऊर्जा बचाई जा सकती है। यह मौन में लाभ है।

साथ ही हमारा जीवन हमारे कर्मों पर निर्भर करता है और हमारा भविष्य भी इसी पर निर्भर करता है। विशेषतः कर्म केवल कर्म ही नहीं होते बल्कि मुँह से बोले गये शब्द भी कर्म के अंतर्गत आते हैं। इसलिए यदि आप मनमर्जी से बोलेंगे तो इसका परिणाम आपको जीवन में भुगतना पड़ेगा। इसीलिए पत्रीजी कहते हैं, 'हमारे मुंह के शब्द हमारे माथे की लिखावट हैं।' मौन हमारे शब्दों को नियंत्रित करता है। वाणी पर नियंत्रण रहता हैं। कई लोग शब्दों पर कौशल न होने के कारण झूठ बोलते हैं। झूठे लोग झूठ बोलते रहते हैं। महान के लिए भी लोग गलत बातें कहते हैं। वे अपनी बात कहते है और निभाते नही। साथ ही कुछ लोगों का अपने शब्दों पर नियंत्रण नहीं होता, वे

दूसरों को गाली देते हैं, डांटते हैं, मौखिक रूप से अपमान करते हैं, अपमानित करते हैं, हल्की बात करते हैं। और वे जो भी शब्द बोलते हैं वे हानिकारक होते हैं। ऐसे शब्द न केवल दूसरों को परेशान करते हैं। बिना जाने वह खुद भी बहुत कुछ खो देते हैं। चुप रहने से यह सब होता है। मौन का अभ्यास करके उन सब पर काबू पाया जा सकता है। ऐसी गलतियाँ करने से बचा जा सकता है। ये सब मौन रहने से होने वाले लाभ हैं।

ऐसे सभी लाभ मौन के कारण ही मिलते हैं, और 'पुण्य' भी हमें मिलता है। इसके अलावा मौन रहने के गुण से धन की वृद्धि नहीं होती। नहीं बढ़ेगी संपत्ति।

जागरण

साथ ही, यदि आप सतर्क हैं तो इसे 'सदाचार' कहा जाता है। चूँकि हमने सोचा है कि 'पुण्य' का अर्थ वह लाभ है जो हमें मिलता है, आइए देखें कि सतर्कता का क्या लाभ है? बहुत से लोग सतर्कता के बारे में सोचते हैं कि बिना सोए पूरी रात जागते रहना। जागकर रहना ही लोग जागरण समझते है। ऐसे जागोगे तो ऐसा लगेगा जैसे जाग रहे हो। इसीलिए कुछ लोग फ़िल्में देखते हैं, कुछ लोग टी.वी. देखते हैं, और कुछ लोग पूरी रात जागकर महाकाव्यात्मक लीलाएँ करते हैं। इसका मतलब है सावधान रहना। ऐसा करके वे सोचते हैं कि उन्हें बहुत पुण्य मिला है। लेकिन हम पूरी रात जागने के फायदे की कल्पना कर सकते हैं। यदि आप पूरी रात जागते रहेंगे, तो आप अपनी ऊर्जा खो देंगे और अगले दिन बिना कुछ किए सो जाना पड़ेगा। अगर आप दिन में जागते हैं तो आप कोई भी काम ठीक से नहीं कर पाते। साथ ही, कुछ क्षेत्रों में यह भी माना जाता है कि अगर आप पूरी रात सोए बिना भगवान पर नजर रखें तो यह पुण्य का काम होता है। इसलिए, शिवरात्रि पर, पूजादिकाओं को पूरा करने के बाद,

वे पूरी रात बिना सोए शिव की ओर देखते हुए बिताते हैं। उनकी दृष्टि में शिवलिंग ही शिव है। इसीलिए वे लिंग की निगरानी करते हैं।

लेकिन किसी भी मामले में, 'असली सतर्कता पूरी रात जागते रहना और भगवान पर ध्यान केंद्रित करना है'। लेकिन यहां हमें यह जानना होगा कि असली भगवान कौन है? वह किस तरह का है? कहाँ है? वह इन्हें जाने बिना हम ईश्वर पर ध्यान कैसे केंद्रित कर सकते हैं? अधिकांश लोग शिवलिंग और मूर्ति को भगवान मानते है। लेकिन वेमनयोगी ने भगवान कौन हैं? वह कहां हैं? उन्होंने बहुत स्पष्ट से कहा था !

सिललु चूसी नरुलु सिवूडनि भविन्तुरु
सिललु सिलले कानी सिवुडु काडु
तनलोनी सिवुनि तानेला टेलियडो
विस्वाधभिरामा विनुरावेमा

मनुष्य चट्टानों को देखकर सोचता है कि यही शिव हैं, लेकिन चट्टानें शिव नहीं हैं, असली भगवान शिव उनके भीतर हैं। सिर्फ वे चट्टानें हैं, शिव नहीं। वेमना योगी कहते थे कि मनुष्य यह महसूस करने में असमर्थ हैं।

और हर किसी को यह जानना चाहिए कि असली भगवान शिव आत्मा के रूप में उनके भीतर मौजूद हैं। इसलिए, जो पूरी रात नहीं सोता है और अपने भीतर आत्मा के ज्योति रूप पर ध्यान केंद्रित करता है, वही वास्तव में जागता है। वही असली 'सतर्कता' है। और हमें अपने भीतर शिव पर ध्यान केंद्रित करने के लिए क्या करना चाहिए? दूर स्थित भगवान शिव पर ध्यान केंद्रित करने के लिए व्यक्ति को अंतर्मुखी होने की आवश्यकता है। वह है "श्वास पर ध्यान" करना। तो शिवरात्रि पर, जो कोई भी रात भर बिना सोए ध्यान करता है... मानो वह सचमुच 'सतर्क' है। जो 'सतर्क' रहेंगे उन्हें बहुत 'पुण्य' मिलेगा। यानी कई तरह के फायदे होते हैं. चलिए कुछ फायदों के बारे में बात करते हैं.

इस प्रकार रात भर शरीर, इंद्रियों और मन को पूर्ण आराम देने से बहुत सारी ऊर्जा बचती है। ऊर्जा संरक्षण शरीर में ऊर्जा बढ़ाने का एक तरीका है। इतना ही नहीं, जब ध्यान में मन खाली होता है तो हमें ब्र्ह्मांड से अतिरिक्त ऊर्जा मिलती है। इस तरह हमारे अंदर ऊर्जा बढ़ने से कई बीमारियाँ कम हो जाती हैं। शरीर में कई कार्य ठीक से काम करते हैं। तो हम स्वस्थ रह सकते हैं।

साथ ही ध्यान में बेचैन मन शांत हो जाता है। इस तरह मन को शांति मिलती है। यानी हमें मानसिक शांति मिलती है। जब मन मे अशांत चला जाता है तो मन एकाग्र हो जाता है। इसलिए हम अपने हर काम पर अपना ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। जिसके कारण हम कोई भी कार्य कुशलता से कर पाते हैं। हम किसी भी क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त कर सकते हैं। हम ऊंची चोटियों तक पहुंच सकते हैं। हमें सबकी सराहना मिलेगी। इसके अलावा, जब मन शांत होता है, तो हम वर्तमान में जी सकते हैं। अपना जीवन व्यर्थ में बर्बाद नही करते। इसके बाद हमेशा खुश रहते हैं। बीता हुआ जीवन का चिंता नही करतें। भविष्य की चिंता नही करते। जब मन को स्थिर रखा जाता है तो मन धीरे-धीरे शुद्ध हो जाता है। इस प्रकार कुछ अधिक मुनाफा होगा। जब मन शुद्ध यानि पवित्र होता है यानि अच्छा हो जाता है तो हम अच्छे कर्म करते हैं। इसका मतलब है कि हम दुनिया के लिए अच्छे काम करेंगे। किसी को कष्ट या क्षति न पहुंचाएं। जब हम अच्छे काम करते हैं तो हमें जीवन में अच्छी चीजें मिलती हैं।

जब मन शुद्ध हो जाता है तो हमारे गुण बदल जाते हैं। जो बुरी आदतें काम नहीं करतीं वे अपने आप दूर हो जाती हैं। क्योंकि किये गये सभी कार्य अच्छे हैं, अच्छे कर्म करने से भविष्य में उनके सभी परिणाम सुखद होंगे। जीवन आनंदमय हो जाता है. मन की शुद्धि से सात्विक गुण उत्पन्न होता है। हम सोच सकते हैं। बुद्धि बढ़ती है। विवेकपूर्ण ज्ञान उत्पन्न होता है। हम अच्छे और बुरे,

न्याय और अन्याय, धर्म और दुष्टता के बीच अंतर जान सकेंगे। हम सृष्टि और सृष्टि के गुणों के अनुसार आचरण करते हैं। शाश्वत ज्ञान की प्राप्ति होती है। सांसारिक विचार दूर हो जाते हैं और हम ईश्वर के बारे में सोचने लगते हैं। आइए धीरे-धीरे उसे जानें।

ऐसा कहने के बाद, इसके कई फायदे हैं। यदि आप सतर्क हैं, अर्थात, यदि आप सच्चे ईश्वर पर ध्यान केंद्रित करते हैं, अर्थात, यदि आप आत्मा पर ध्यान केंद्रित करते हैं, तो सभी लाभ और सभी पुण्य मिलते है। इसके अलावा ऐसा करते समय मन धीरे-धीरे खाली हो जाता है। तब देवत्व प्राप्त होता है। दैवीय शक्तियां उपलब्ध होती है। अलौकिक ज्ञान की प्राप्ति होती है। अलौकिक शक्तियां उपलब्ध होती है। हम वो काम करते हैं जो इन इंद्रियों से नहीं किया जा सकता। हम ऐसी चीजें जानते हैं जो नहीं जानी जा सकतीं। अज्ञात ज्ञान प्राप्त होता है. सब कुछ अनुभवजन्य रूप से ज्ञात है। आत्मबोध धीरे-धीरे आता है। हमें दिव्यता प्राप्त होती है। हमारी जिंदगी बदल जाएगी. एक इंसान माधव में बदल जाता है। और अगर आप विस्तार से कहना चाहें तो बहुत कुछ कह सकते हैं। अतः ध्यान के कारण, अर्थात सच्चे ईश्वर पर ध्यान लगाने के कारण, अर्थात वास्तविक सतर्कता के कारण, सब कुछ गुणकारी है, सब कुछ लाभकारी है।

पूजा

इसी प्रकार पूजा करना पुण्य कहलाता है। और देखते हैं पूजा करने से हमें क्या लाभ मिलता है। अगर आप दुनिया पर नज़र डालें तो आपको लगभग हर चीज़ नकलची ही मिलेगी। लेकिन सोचने वाले कम ही होते हैं। क्योंकि जो कोई भी कुछ करता है उसके तीन ही कारण होते हैं।

१) यह पीढ़ी दर पीढ़ी एक प्रथा के रूप में किया जा रहा है।

२) हर कोई यह कर रहा है।

३) वही करना जो कोई तुमसे करने को कहे।

किसी भी तरह से कोई किसी दूसरे की नकल कर रहा है। लेकिन कोई नहीं सोच रहा। साथ ही उपरोक्त कारणों से भी पूजा की जाती है। और कुछ नही सोच विचार करते है। तो आइये जानते हैं पूजा करने से क्या लाभ होता है। ऐसा माना जाता है कि पूजा करने के कई फायदे होते हैं। पूजा से भगवान को प्रसन्न किया जा सकता है। उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जा सकता है। कठिनाइयों से छुटकारा पाया जा सकता है । और अपनी इच्छाओं को पूरा किया जा सकता है। बहुत से लोग कहते हैं कि पूजा ही भगवान को प्रसन्न करने का एकमात्र तरीका और सबसे आसान तरीका है। बहुत से लोग मानते हैं। बहुत से लोग यह भी मानते हैं कि पूजा-पाठ के जरिए वे भगवान के करीब पहुंच सकते हैं।

कुल मिलाकर, बहुत से लोग नियमित पूजा कर रहे हैं क्योंकि उन्हें

लगता है कि पूजा से बहुत पुण्य मिलता है। और देखते हैं पूजा का गुण क्या है? जैसा कि आप देख सकते हैं, पूजा किसी गुड़िया, या मूर्ति, या तस्वीर की जाती है। ऐसी पूजा करना भगवान की पूजा करना माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि ऐसा करने से भगवान प्रसन्न होंगे और दयालु होंगे। गुड़िया की पूजा करने से ऐसा माना जाता है मानो भगवान की पूजा की गई हो। ऐसे लोग हैं जो सोचते हैं कि आकृति ही ईश्वर है। लेकिन याद रखें कि भगवान को पूजा से ज्यादा सेवा पसंद है। उनकी सेवा करने में सुख मिलता है। इसीलिए सत्य साईं बाबा ने कहा कि सबकी और हर चीज की सेवा करो। कारण यह है कि 'सभी प्राणियों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है'। क्योंकि सभी जीवित प्राणी ईश्वर की अभिव्यक्ति हैं।

माता-पिता को लीजिए, उनकी सेवा करने से क्या आप खुश होते हैं? क्या यह पूजा से बेहतर है? यदि आप जानना चाहेंगे कि इससे आपके बुजुर्ग माता-पिता पर क्या प्रभाव पड़ा, तो वे अवश्य कहेंगे कि सेवा ने मुझे प्रसन्न किया है। पूजा करो। सेवा भी करें। यदि आप ऐसा करते हैं, तो चाहे आप उन्हें कितनी भी खुशी दें, वे बहुत बूढ़े होने पर आपके बच्चों से सेवा मांगेंगे।

पूजा से आपको कोई लाभ नहीं होगा। इसके अलावा, आपके बच्चों द्वारा की गई सेवा से आपको बहुत खुशी मिलेगी। इसलिए न केवल हमारे लिए, बल्कि भगवान के लिए भी सेवा पूजा से अधिक सुखदायी है। और हम भगवान की सेवा कैसे करते हैं? क्योंकि सभी जीव भगवान के ही रूप हैं। सभी प्राणियों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है।

भगवत गीता में यही कहा गया है।

अहमात्मा गुडाकेश, सर्वभूतसाय स्थितः (भ.गी. 10-20)

अर्जुन! भगवान ने कहा कि मैं सभी प्राणियों में आत्मा हूं। शिरडी बाबा

ने यह भी कहा, "पूरे ब्रह्मांड में जो मुझे देख सकता है वह मेरा प्रिय है। इसलिए मैं अलग हूं और जीव अलग है, यह द्वंद्व छोड़कर मेरी सेवा करो।" (साई सच्चरित्र अध्याय 9 - पृष्ठ 81) और यदि भगवान सेवा से प्रसन्न होते हैं, तो हर कोई पूजा क्यों कर रहा है? पूजा से क्या लाभ? और प्राचीन बुजुर्गों ने दुनिया की पूजा क्यों की? इस पर कोई भी संदेह कर सकता है। तो चलिए थोड़ा जान लेते हैं। ईश्वर, जो एक आत्मा रूप है, निराकार है और आंखों के लिए अदृश्य है। उस स्थिति में, आम लोगों को कैसे पता चलेगा कि ईश्वर का अस्तित्व है? नहीं बूझते हो? इसीलिए विद्वानों ने पूजा की यह विधि चलाई है कि किसी गुड़िया, मूर्ति या फोटो की पूजा करने से आम लोगों को पता चल जाएगा कि ईश्वर एक ही है। इसके बारे में सोचो। यदि मूर्तियाँ और तस्वीरें नहीं होंगी तो आम लोगों को कैसे पता चलेगा कि ईश्वर का अस्तित्व है? नहीं पता चलेगा? इसलिए भगवान की आकृतियाँ और तस्वीरें।

और क्या उस आकृति और फोटो को एक बार देखना काफी है? क्या तुम फिर भूल जाओगे? इसलिए उन्होंने नियमित पूजा-अर्चना करने को कहा। इसका मतलब है कि हर दिन पूजा करने से आप हर दिन भगवान को याद कर पाएंगे। थोड़ा सोचो। कितने लोग पूजा करने के बाद अगले दिन तक भगवान को याद करते हैं? भगवान की दृष्टि में कितने हैं? विचार करें तो बहुत से लोगों को ईश्वर के दर्शन नहीं होते। भगवान को याद भी नहीं आता। जैसे ही पूजा पूरी हो जाती है, वे संसार, कमाई, समस्याओं और मनोरंजन जैसी चीजों में डूब जाते हैं। सोचना! उस भक्ति के बिना कितने लोग भगवान को याद करते हैं? क्या आप जानते हैं कि वास्तविक ईश्वर है? इसलिए पूजा करें। देखिए, मान लीजिए आप कार में कहीं यात्रा कर रहे हैं। वे इसी तरह की बातें करते हुए कई किलोमीटर की यात्रा करते हैं। लेकिन अगर रास्ते में कोई मंदिर या मूर्ति दिख जाए तो तुरंत हाथ जोड़ लेते हैं और दोनों हाथ करीब आ जाते हैं। इसलिए वे

अपने हाथों से कुछ करते हैं। और जो काम तब तक नहीं हुआ था वह क्यों किया? अर्थात उस मंदिर को देखते ही भगवान का स्मरण हो आया।

इसके बारे में सोचो। यदि कोई ईश्वर नहीं है, तो चाहे आप कितने भी सैकड़ों किलोमीटर की यात्रा करें, क्या आप ईश्वर का ध्यान कर सकते हैं? क्या इसका मतलब यह नहीं होगा? इसके बारे में सोचो। यदि मूर्तियाँ और मंदिर न हों तो क्या मनुष्य जान सकेंगे कि ईश्वर का अस्तित्व है? क्या भगवान याद है? इसका मतलब निश्चित रूप से नहीं है। अर्थात पूजा से यह जानना है कि ईश्वर का अस्तित्व है। पूजा से यही लाभ मिलता है अर्थात पुण्य मिलता है। सोचिए अगर आपके घर में दीवार पर गांधी की तस्वीर और मेज पर एक गुड़िया हो। क्या आपके घर में दीवार पर गांधीजी टंगे हैं? वह मेज पर बैठता है और कई दिनों तक बिना हिले-डुले आपको घूरता रहता है? आप कहते हैं कि ऐसा नहीं है। और आपने फोटो क्यों लगाई? कहा जाता है कि गांधी को याद करो। मैं उसे पसंद करती हूँ। कहते हैं कि मैंने उनकी तस्वीर इसलिए लगाई है ताकि मैं उन्हें भूल न जाऊं। साफ है कि तस्वीरें और आंकड़े उन्हें याद दिलाने के लिए हैं।

जान लें कि 'आकृतियाँ और चित्र आदर्श मूर्तियाँ हैं, आराधना मूर्तियाँ नहीं'। वे उन्हें याद दिलाने के लिए हैं, उनके जीवन का अनुकरण करने के लिए हैं। इसके अलावा, उनके संदेशों और शिक्षाओं को याद रखना और उन्हें व्यवहार में लाना। इसीलिए सत्य साईं बाबा ने कहा, 'मेरे पैर नहीं, बल्कि मेरे शब्द पकड़ो।' उन्होंने यह भी कहा, 'मेरा जीवन आपके लिए एक किताब है'। अतः यह स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है कि ये पूजाएँ, मूर्तियाँ और तस्वीरें ईश्वर की उपस्थिति को दर्शाती हैं। इसी में हमारा फ़ायदा है। इसीलिए पूर्वज ने उनसे परिचय कराया।

इसके अलावा पूजा से एक और फायदा होता है। अर्थात जो लोग पूजा

करेंगे वे संतुष्ट होंगे। ऐसा करने वालों को भुक्ति मिलती है। देखा जायेगा कि उस लाभ के अतिरिक्त किसी को मुक्ति नहीं मिल सकती। इसीलिए चाहे कितनी भी पूजा-अर्चना कर ली जाए, करने वालों को परेशानियां, कष्ट और बीमारियां आती ही रहती हैं। हर किसी को किसी न किसी समस्या का सामना करना पड़ रहा है। ऐसा नहीं लगता कि ऐसे लोग भी हैं जिन्हें समस्या नहीं है। इसके बारे में सोचो। यदि पूजा-पाठ से सभी समस्याएँ हल हो जाएँ तो क्या संसार में कोई समस्याएँ ही रहेंगी? क्या समस्याएं होंगी? क्या बीमारियाँ होती नही होंगे न? इसलिए पूजा, यह जानना है कि ईश्वर है। इसे शिरडी बाबा ने नौ प्रकार के भक्त में से पहला 'श्रवणम' कहा। अर्थात ईश्वर के विषय में सुनना अर्थात जानना। जितना अधिक आप पूजा करेंगे, उतना अधिक आपको पता चलेगा कि भगवान हैं। इस पर विश्वास करें या नहीं। यही पूजा का गुण यानि लाभ है।

स्त्रोत

साथ ही अगर आप स्तोत्र का पाठ करते हैं यानी स्तोत्र करते हैं तो भी आपका कल्याण होता है। तो भजन से क्या लाभ? बुजुर्गों और विद्वानों ने स्तोत्र क्यों लिखे? क्यों पढ़ें? आपको वो बातें पता होनी चाहिए। आइए सबसे पहले जानते हैं कि स्तोत्र क्या है? स्तोत्र का अर्थ है स्तुति करना, अर्थात - महिमा गाना, अर्थात महानता का दावा करना। ईश्वर की स्तुति करना है। इसका अर्थ है यह जानना कि ईश्वर महान है। जो लोग जानते हैं कि निरंतर स्तुति के कारण ईश्वर का अस्तित्व है, वे यह भी जानेंगे कि ईश्वर बहुत, बहुत महान है। क्योंकि सिर्फ यह जानने से कि ईश्वर का अस्तित्व है, इससे कोई फायदा नहीं है। किसी को भी उसमें दिलचस्पी तभी हो सकती है जब उसे पता हो कि वह महान है। उसके बारे में और जानने को उत्सुक होती है। अतः विद्वानों द्वारा भजनों के माध्यम से भगवान की महिमा का वर्णन किया गया। इसे ही शिरडी बाबा ने नव विधि भक्ति में दूसरे को 'कीर्तनम' कहा है।

इस प्रकार, विष्णु सहस्र नाम स्तोत्र और ललिता सहस्र नाम स्तोत्र के माध्यम से भगवान की महिमा को हजारों नामों से हजारों तरीकों से वर्णित किया गया है और दुनिया को अवगत कराया गया है। उन नामों का बार-बार स्मरण करने से भगवान की महिमा का पता चलता है। इसीलिए इसे बार-बार पढ़ा जाता है। इरादा उनके अर्थ जानने का नहीं है, बल्कि उनमें ईश्वर के प्रति रुचि पैदा करने और सांसारिक चीजों के प्रति वितृष्णा पैदा करने का है। क्योंकि उन्हें ईश्वर की महानता का पता चल जाता है। लेकिन सभी भजन तो पढ़ रहे हैं लेकिन उनके व्यवहार में कोई बदलाव नहीं आ रहा है। लेकिन अगर कोई

कितनी भी बार भजन पढ़ता है तो भी उसे भगवान की महिमा का पता नहीं चलता, तो कम से कम उसे पढ़ने का पुण्य; भी नहीं आता। यानि कोई लाभ नहीं है। इसका मतलब यह है कि जो किया गया वह व्यर्थ है। कारण, पढ़ रहा है। लेकिन समझ नही पा रहा है। आइए। देखें कि समझने से क्या फायदा होता है।

क्योंकि इस सृष्टि में दो हैं।

(1) ईश्वर, (2) उसके द्वारा सृष्टि। ईश्वर दिखाई नहीं देता। उनकी रचना देखने को मिलती है। सृष्टि ही नहीं, सृष्टि की वस्तुएँ भी शाश्वत नहीं हैं। लेकिन भगवान शाश्वत है। आगे देखें तो सृष्टि में सब कुछ बदलता और बदलता रहता है। लेकिन ईश्वर बदलता नहीं। यदि आप देखें, तो सृष्टि में सब कुछ वैसा ही है जैसा वह है।लेकिन अस्तित्व में कुछ भी नहीं है। इसके अलावा, सृजन में खुशी है। लेकिन यह अस्थायी है। इसी प्रकार ईश्वर के साथ सुख तो है लेकिन वह शाश्वत है। विद्वानों ने भजनों के माध्यम से अनेक बातों का यही अर्थ बताया है। लेकिन मनुष्य को इसका एहसास नहीं है और ईश्वर की महानता को जानने से बहुत पहले ही, वे उसके द्वारा बनाई गई सृष्टि में छोटी-छोटी चीजों की इच्छा और आशा करते हैं। वे वही पाना चाह रहे हैं। इस प्रकार इस सृष्टि में धन, सोना, संपत्ति, घर, कार, पद, नौकरी, बच्चे, सब कुछ महान माना जाता है। वे उनमें ख़ुशी चाहते हैं। वे चाहते हैं कि प्रभु उन्हें भी वैसा ही प्रदान करें। उनके लिए गलतियाँ और पाप करना। अंततः कष्ट सहना पडता है।

लेकिन इसके बारे में नहीं सोच रहे है। वे जो कुछ भी चाहते हैं और जिसकी आशा करते हैं। वह तुच्छ है। अनित्य हैं। उनके न होने का दुःख उनसे मिलने वाली ख़ुशी से भी बड़ा है। अगर उन्हें यह मिल भी जाए, तो वे यह

महसूस करने में असफल हो जाते हैं कि खुशी अस्थायी है, लेकिन शाश्वत नहीं है। परन्तु ईश्वर इन सब से बड़ा है। इसका कारण यह है कि उसी ने इन सब वस्तुओं की रचना की है। इसके अलावा, जिसने बनाया वह हमेशा बनाए गए से बड़ा होता है। क्योंकि यदि उसकी रचनाएँ इतनी आकर्षक हैं, तो वह कितना आकर्षक है? वह कितना महान है।

इसलिए, उनकी रचना की छोटी और क्षणभंगुर चीज़ों की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। मनुष्य को केवल ईश्वर पर ही आशा रखनी चाहिए, जो शाश्वत महान है। उनको पाने की इच्छा होनी चाहिए। ये छोटी चीजें पाने की कोशिश कर रहे हैं। मनुष्य को ईश्वर को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए, जो सबसे महान और अनंत शक्ति का स्वरूप है। क्योंकि इस अनंत सृष्टि में जो भी मिलता है, वह एक ही मिलता है। लेकिन यदि आप ईश्वर को प्राप्त करते हैं, तो आपको सृष्टि में सब कुछ मिलता है। लेकिन इंसान अरबों दुनियाओं में से एक इस दुनिया की कुछ छोटी-छोटी चीजों को पाने के लिए जीवन भर प्रयास करता है। परंतु ईश्वर प्राप्ति के लिए तनिक भी प्रयास नहीं कर रहे हैं।

इन भजनों को चाहे कितनी भी बार पढ़ा जाए, ईश्वर की महानता समझ में नहीं आती। भगवान को पाने का कोई एहसास नहीं है। वर्तमान में इन स्तोत्रों का अर्थ बताने वाले विद्वान कह रहे हैं कि ईश्वर महान है, उसकी शरण लो, उसकी आराधना करो, उसकी पूजा करो। कहा जाता है कि आपकी सभी मनोकामनाएं पूरी होंगी लेकिन ये नहीं कहते कि, ये सब तुच्छ हैं, क्षणभंगुर हैं, ये दुखों को दूर नहीं कर सकते। आप उन्हें नहीं पाना चाहिए। केवल ईश्वर की ही इच्छा करो। उसे पाने का प्रयास करें। इसका मतलब यह है कि यदि आप उसे पा लेते हैं तो आपको सब कुछ मिल जाता है। इसके अलावा, कहा जाता कि यदि ईश्वर की प्राप्ति हो जाये तो इस सृष्टि में फिर कुछ भी प्राप्त करने योग्य नहीं रह जाता। इसलिए उचित समझ के बिना आम लोगों को ईश्वर

प्राप्ति का विचार ही नहीं होता। यदि आप इसके बारे में सोचें, तो हर कोई जीवन भर यही चाहता है की वे अभी भी इच्छाएँ पूछ रहे हैं। इच्छाएँ बनी रहती हैं। क्या इसका मतलब यह है कि इंसान को कितना भी मिल जाए, फिर भी कुछ न कुछ पाना बाकी रहता है?

लेकिन भगवान मिल जाए तो सब कुछ मिल जाता है। कारण यह है कि जिनको ईश्वर मिल गया है उन्हें इस सृष्टि का सारा ज्ञान प्राप्त हो जायेगा। शाश्वत अवर्णनीय, ब्र्ह्म आनंद प्राप्त होता है, शांति प्राप्त होती है, संतोष प्राप्त होता है, भय दूर होता है, इच्छाएँ नष्ट होती हैं, अभिमान नष्ट होता है, लोभ दूर होता है, धर्म का दर्शन होता है, अनेक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। एक तरह से वह विश्वामित्र की तरह हर रचना पर रचना कर सकते हैं। ईश्वर मिल जाए तो ये सब मिल जाता है।

इसलिए संपूर्ण जीवन भर ईश्वर से नहीं मांगा जाना चाहिए। भगवान को ही पूछो। इसे ईश्वर से प्राप्त करने का प्रयास नहीं। भगवान को पाने का प्रयास करें। आपका जीवन धन्य हो जायेगा। भजन पढ़ने के बाद आपको यही जानना चाहिए। उन्हीं ऋषि-मुनियों ने हमें यही सन्देश दिया है कि ईश्वर महान है। भजन का लाभ उसे प्राप्त करना जानना है। भजन से हमें यही पुण्य मिलता है। स्तोत्र का यही अर्थ है। स्तोत्र का अर्थ है भगवान की महिमा को जानना। तात्पर्य ईश्वर को पाने के लिए जानना है।

भले ही आप लाखों जन्म ले लें,
लेकिन जब तक आप ब्र्ह्म अनुभव प्राप्त नहीं कर लेते,
तब तक आप बेचैनी और दुःख नहीं छोड़ेंगे।

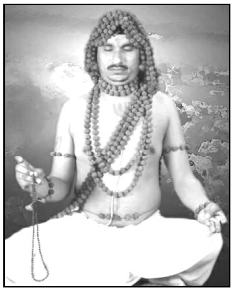

जप

और जब तक हम जानते हैं कि ईश्वर का अस्तित्व है, जब तक हम जानते हैं कि वह महान है, क्या हमारी समस्याएं खत्म हो जाएंगी? क्या ईश्वर तक पहुँचने के लिए यह पर्याप्त है? वह काफी नहीं है। इसीलिए बुजुर्गों और विद्वानों ने भी जप का प्रचलन किया। क्योंकि आम लोगों को अपनी समस्याओं और जिम्मेदारियों के कारण रोजमर्रा की जिंदगी में कई कार्यों के दबाव के कारण यह भूलने का मौका मिलता है कि भगवान कितने महान हैं। भगवान को भूलने से क्या फायदा? क्या कुछ भी नहीं है? इसलिए जप। कहने का तात्पर्य यह है कि बुजुर्गों और विद्वानों ने भगवान के नामों और नामों को मंत्र रूपक के रूप में बार-बार सोचने और याद करने के लिए मंत्रों का परिचय दिया है। जब भी खाली मिलें तो भगवान का मन में चिंतन और जप करने से उन्हें भुलाया नहीं जा सकता।

इसीलिए बहुत से लोग मन ही मन सोचते हैं 'कृष्ण..कृष्ण..राम..राम.., शिव..शिव, साईराम..साईंराम।' आप भूल नहीं पाएंगे। यही है जप का लाभ भगवान को नहीं भूलना है। शिरडी बाबा ने स्मरणम के रूप में यही कहा, नौ प्रकार के भक्ति में से तीसरा 'स्मरण' है।। इसके बारे में सोचें। जब तक हम जानते हैं कि भगवान कि अत्सित्व हैं, जब तक हम जानते हैं कि वह महान हैं, जब तक हम उसे नहीं भूलते, क्या यह पर्याप्त है? क्या हमारी परेशानियां खत्म हो जाएंगी? क्या हमारी समस्याएं दूर हो जाएंगी? इसका मतलब निश्चित रूप से पर्याप्त नहीं है। क्या पूजा, स्तोत्र और मंत्रों से मिलने वाला पुण्य पर्याप्त है? इसका मतलब पर्याप्त नहीं है।

हमारी समस्याएँ और कठिनाइयाँ भले ही दूर हो जाएँ, यदि हम उनसे सदैव के लिए छुटकारा पाना चाहें, अर्थात मुक्ति पाना चाहें, तो कोई लाभ नहीं, कोई लाभ नहीं। क्योंकि जो मनुष्य कितना भी कुछ कर ले, जो ईश्वर की शरण में नहीं जाता, अर्थात नहीं पहुँचता, अर्थात प्राप्त नहीं करता, उसकी कठिनाइयाँ दूर नहीं होतीं। समस्याएँ ख़त्म नहीं होतीं। आइए जानते हैं भगवान की शरण पाने के लिए क्या करना चाहिए।

ईश्वर कौन है?

ईश्वर की शरण में जाने के लिए हमें तीन बातें विशेष रूप से जानने की आवश्यकता है।

(1) ईश्वर कौन है?

(2) वह कहाँ रहता है?

(3) कैसे सहारा लें?

इन बातों को जाने बिना कोई ईश्वर की ओर कैसे मुड़ सकता है? उसकी शरण में आये बिना हमारी परेशानियाँ कैसे दूर हो सकती हैं? तो आइए जानते हैं ये तीन बातें खास। क्योंकि वे पूजा-पाठ, भजन-कीर्तन में पड़ गये और ये तीनों बातें भूल गये। वास्तविक ईश्वर के बारे में जानने का कोई विचार नहीं है। वे सोचते हैं कि वे जो कुछ भी करते हैं वह पर्याप्त है। इसीलिए वे इसकी भरपाई पूजा, स्तोत्र और मंत्रों से कर रहे हैं। लेकिन यदि आप कठिनाइयों से छुटकारा पाना चाहते हैं, यदि आप समस्याओं से छुटकारा पाना चाहते हैं, तो आपको भगवान की शरण में जाना होगा।

आइए, एक छोटा सा उदाहरण देखें। मान लीजिए आपका कोई दोस्त है। जिससे आप दिल्ली में फोन पर मिले थे? वह किस तरह का है? वे कहां रहते हैं? उस तक कैसे पहुंचें? तुम्हें पता नहीं आपको दिल्ली में कोई काम पड गया। फिर उसने फोन पर कहा कि - मेरे पास आओ तो मैं तुम्हारा काम कर दूंगा। आप दिल्ली गए। अपने दोस्त को कॉल करना चाहता है। लेकिन रास्ते में आपका फोन गिर जाता है और फोन की सारी रिकॉर्डिंग्स खो जाती हैं। अब आप अपने दोस्त को कॉल नहीं कर सकते। फोन के अलावा उसके बारे में जानने के लिए कोई और सबूत नहीं है। इसके अलावा अगर आप उसके पास

जाएंगे तो पता नही वह कैसा होता है? पता नहीं वह कहां पर है? समझ नहीं आ रहा कि उस तक कैसे पहुंच जाए। कहो क्या तुम उसके पास जा सकते हो? उसके आश्रय कैसे ले सकते हो? क्या आपका काम बनेगा? कुछ नहीं होता है ना?

इसके अलावा, यह जाने बिना कि ईश्वर कौन है... बिना यह जाने कि वह कहाँ है... अर्थात, यह जाने बिना कि उसके पास कैसे जाना है? कोई उसके पास कैसे जा सकता है? मुझे बताओ उपासना से आपको ईश्वर का ज्ञान होता है। भजनों के कारण ही वे महान माने जाते थे। मंत्रोच्चार के कारण उन्हें भुलाया नहीं जा रहा है। लेकिन क्या इन सब में वह शामिल हो सकता है? मुझे बताओ ये सभी चीजें हमें संतुष्ट तो करती हैं लेकिन ईश्वर को सम्मिलित करके हमें मुक्ति नहीं दिला सकतीं? क्या इसका मतलब यह है कि कठिनाइयों को दूर नहीं किया जा सकता?

आप अपने मित्र का नाम 'आनंद' जानते हैं। उनकी बड़ी प्रतिष्ठा मानी जाती है। लेकिन क्या यह उसे करीब ला सकता है? मुलाकात नहीं कर सकते? उसे आश्रय लेने के लिए पर्याप्त नहीं है? तुम चिल्ला रहे हो 'आनंद...आनंद..। कल्पना कीजिए कि आप वहीं माइक पर चिल्ला रहे हैं, तो क्या आप अपने मित्र से पुण्य जा सकते हैं? तो क्या आप दिल्ली की सभी सड़कें घूमने पर भी पहुँच सकते हो? तो मुझे बताओ भगवान कौन है? वे कहाँ है? उन्हे पहुँचने के लिए कैसे करें? भले ही हम बिना जाने-समझे जोर-जोर से चिल्ला कर, माइक लगाकर भजन करने से, और जोर-जोर से जपने से... वह पवित्र स्थान, यह पवित्र स्थान, घूमने से, क्या इससे कोई फायदा होगा? अतः उपरोक्त तीन बातें विशेष रूप से जान लेनी चाहिए। चलो पता करते हैं।

इन तीन सवालों का जवाब किसी को देने की जरूरत नहीं है। ये तीन प्रश्न हैं (1) ईश्वर कौन है? (2) वह कहाँ रहता है? (3) कैसे सहारा लें? भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं भगवत गीता के माध्यम से हम सभी को इसकी जानकारी दी। अध्याय 10 से श्लोक 20 तक के पहले दो प्रश्नों में और अध्याय 12 के श्लोक 3 और 4 के तीसरे प्रश्न में, भगवान कृष्ण प्रकट होते हैं। आइए उन्हें थोड़ा जान लें।

अहं मात्मा गुडाकेश सर्वभूतसाय स्थितः

अहमदिश्च मध्यम च भूताना मन्ता एव च (भ.गी.10-20)

ताः-अर्जुन मैं आत्मा हूं। मैं सभी प्राणियों में विद्यमान हूं। मैं ही इन प्राणियों का आदि, मध्य और अंत हूं। इसका मतलब यह है कि मैं आत्मा हूं। मैं सभी प्राणियों में विद्यमान हूं। इन प्राणियों के उत्पन्न होने से पहले, अर्थात सृष्टि के आरम्भ में, मैं वहाँ था। जब वे अस्तित्व में हैं, मैं अस्तित्व में हूं जब यह सृष्टि अस्तित्व में है। साथ ही भगवान ने कहा कि मैं इन प्राणियों के समाप्त होने के बाद भी, यानी जब यह सृष्टि समाप्त हो जाएगी तब भी वहां रहूंगा।

उपरोक्त श्लोक से हम जान सकते हैं कि 'आत्मा' ही ईश्वर है। गीता में कहीं भी भगवान ने यह नहीं कहा कि मैं कोई मूर्ति या तस्वीर हूं। तो पहला सवाल यह है कि भगवान कौन है? इसे स्पष्ट रूप से 'आत्मा' के रूप में समझा जा सकता है। एक बार फिर जान लें कि 'आत्मा' ही ईश्वर है।

‘भगवान कहाँ है?’

और दूसरा सवाल ये है कि वो कहां होंगे? ये बात उन्होंने उस श्लोक में भी कही थी। “अहं आत्मा गुडाकेश, सर्वभूतसाय स्थितः” अर्जुन! मैं समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा हूँ। इसका मतलब है कि मैं सभी प्राणियों में मौजूद हूं, अर्थात मैं सभी जीवित प्राणियों में मौजूद हूं।

यह जानना चाहिए कि ईश्वर सभी प्राणियों में आत्मा के रूप में विद्यमान है। इसका मतलब है कि सभी मनुष्यों में एक ही ईश्वर है और सभी जानवरों में ईश्वर है, यानी मुर्गी, बकरी, मछली, सुअर, कछुआ, जो भी जानवर हम लेते हैं, हम स्पष्ट रूप से जान सकते हैं कि भगवान उस जानवर में हैं। इसका मतलब है कि हर किसी को पता होना चाहिए कि सभी जानवर भगवत की अभिव्यक्ति हैं। इसलिए, किसी को पता होना चाहिए कि मुर्गे को यातना देना भगवान को यातना देने के समान है, बकरी को यातना देना भगवान को यातना देने के समान है, और मछली को यातना देना भगवान को यातना देने के समान है। सोचिए, जो लोग सोचते हैं कि वे मूर्ति लगाकर और षोडसोपचार की पूजा करके भगवान को प्रसन्न कर रहे हैं, क्या भगवान को पसंद करने वाले लोग वास्तव में उन जीव-जंतुओं पर अत्याचार कर सकते हैं जो भगवान का अवतार हैं? क्या मार सकते हैं? क्या उनका मांस खाया जा सकता है? क्या ऐसा खाना उनकी हिंसा का कारण बन सकता है? इसके बारे में सोचो।

एक तरफ से भगवान के समान कहा जाता है। कहा जाता है कि वह पूजा-पाठ से प्रसन्न होते हैं। स्तोत्रों को पढ़कर उन्हें बहुत महान कहकर

महिमामंडित किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि मैं जप करने के बाद बिना भूले उनका ही स्मरण करता रहता हूं। और वे उसके रूपों पर अत्याचार क्यों कर रहे हैं? क्या भगवान ऐसा करने से प्रसन्न होंगे? क्या उसे अनुग्रह मिल सकता है? यदि तुम ईश्वर को इस प्रकार कष्ट दोगे तो तुम्हें उसकी कृपा से इनकार करना पड़ेगा और क्रोधित होना पड़ेगा। इसलिए जीव-जंतुओं यानी जानवरों पर अत्याचार नहीं करना चाहिए। मारो नहीं। उनका मांस मत खाओ. सबसे पहले यह जानना चाहिए कि ईश्वर कौन है?

एक बार और याद करो. इस सृष्टि में सब कुछ ईश्वर का रूप है। सब एक हैं! यही भगवान कृष्ण का संदेश है। तो मुर्गी मुर्गी नहीं है। मुर्गे के रूप में भगवान, बकरी का अर्थ है बकरी के रूप में भगवान। मछली का अर्थ है मछली के रूप में भगवान। इसीलिए भगवान को दशावतार कहा जाता है। मत्स्यावतारम् एक अवतार है जो यह संदेश देता है कि सभी जलीय जीव भगवान हैं। इसके अलावा, कूर्मावतार का अर्थ एक ऐसा अवतार है जो यह संदेश देता है कि सभी उभयचर भगवान हैं। इसके अलावा, वराहवतरम का अर्थ एक अवतार है जो यह संदेश देता है कि सभी जानवर भगवान हैं। तो पता करो. भले ही रूप अलग-अलग हों, नाम अलग-अलग हों, ईश्वर एक ही है! वह सब कुछ है!

हालाँकि आभूषण अलग-अलग हैं, उनके आकार अलग-अलग हैं! उनके नाम अलग-अलग हैं, लेकिन वे सभी सोने के हैं। उसी सोने से। इसके अलावा, अगर पिघला दिया जाए तो हर चीज एक सोना बन जाती है। साथ ही इस सृष्टि के जीव-जंतु अलग-अलग आकृतियों वाली अलग-अलग प्रजातियों के रूप में नजर आते हैं। जब उनके अलग-अलग आकार होते हैं तो हम पहचान के लिए उन्हें अलग-अलग नामों से बुलाते हैं। हर चीज़ इतनी अलग कैसे हो सकती है? सभी की उत्पत्ति एक ही ईश्वर से हुई है। इसलिए सभी एक हैं. भगवान श्रीकृष्ण का संदेश ही एकमात्र है। बर्तनों के आकार अलग-अलग

दिखते हैं। उनके नाम अलग-अलग हैं. उनके लाभ भी अलग-अलग हैं लेकिन सभी एक ही मिट्टी से आते हैं। यदि बर्तन टूट जाएं तो सब कुछ मिट्टी में समा जाता है। इसलिये यह जान लो कि इस सृष्टि में केवल ईश्वर ही है। इसीलिए ताल्लपाका अन्नमाचार्य कहते हैं "केवल ब्र्ह्मा! परब्र्ह्म ही!" 'कण्डुवगु हिनधिकामुलेन्दुले सभी श्रीहरे! आंतरिक आत्मा' कहने का मतलब है कि भगवान एक है! केवल एक ही ईश्वर है जो अदृश्य है।

तो आइये देखते हैं इस रचना में क्या बुराई है। अन्नमाचार्यों ने कहा कि उच्चतर जैसी कोई चीज नहीं है क्योंकि श्रीहरी ही सभी के अन्तर्यामी हैं। अतः इस सृष्टि में राजा महान नहीं है। गरीब हीन नहीं है। कारण दोनों में श्रीहरी ही हैं। और जब दोनों में से एक ही श्रीहरि हैं तो सबसे महान कौन है? कौन कम है? क्या दोनों बराबर हैं? इसके अलावा ब्रह्मण उच्च जाति नहीं है, शूद्र निम्न जाति नहीं है। दोनों मे रहने वाला कौन है? केवल एक! श्रीहरी के रूप में! भगवान ही कहते है। इसलिए, पढ़ाने वाला विद्वान और सुनने वाला आम आदमी भी एक ही हैं। इस रचना में कोई मतभेद नहीं है। इसका कारण यह है कि इस सृष्टि में ऐसा कुछ भी नहीं है जो ईश्वर न हो। इसीलिए उन्होंने कहा 'सर्वं खल्विदं ब्र्ह्मा' ।

यह हिंदू धर्म द्वारा सिखाया गया सत्य है। सच्चे हिंदू वही हैं जो इस सत्य को समझते हैं। इसके अलावा, जो लोग विभिन्न भेष धारण करते हैं, उन्हें विशेष नामों, विभूतियों और रस्सियों से अलंकृत किया जाता है, तो वे हिंदू नहीं हैं। हिंदू वे हैं जो सोचते हैं कि सब कुछ एक है और सभी कुछ एक है और वैसा ही कार्य कर सकते हैं। ये वही लोग हैं जो हिंदू धर्म को समझते हैं. जो लोग भगवान के संदेश को समझते हैं. यदि आप यह सत्य जान लेंगे तो आपको अमीर और महान होने का घमंड नहीं होगा। उसे गरीब या हीन समझकर नहीं देखा जाता। क्योंकि वह 'श्रीहरी' हर किसी में है! वह अमीर आदमी में है. जब

दरिद्रों में एकमात्र श्रीहरि ही हैं तो कौन बड़ा है? कौन कम है? इसके बारे में सोचो।

इसीलिए इतने ज्ञानी आदि शंकराचार्य भी इस छोटे से सत्य को नहीं समझ पाए, लेकिन जब उन्हें यह अहसास हुआ कि मैं सबसे महान हूं । तो भगवान शिव ने एक छोटी सी घटना के जरिए उनकी आंखें खोल दीं। एक बार काशी क्षेत्र में शंकराचार्य ने गंगा में स्नान किया और अपने शिष्यों सहित लौट आये! रास्ते में उसकी मुलाकात एक चांडाल से हुई। तुरंत शिष्यों को उन चांडाल को एक तरफ हटने के लिए कहा गया। उसने नहीं हटा । तब शंकराचार्य ने भी जाने को कहा। फिर छण्डाला ने कहा मैं क्यों हटू ? उसने कहा। तब शंकराचार्य ने कहा कि तुम छण्डाला हो। तुरन्त वह चांडाल-मैं तुमसे कम हूँ, तुम्हारा शरीर और मेरा शरीर एक ही पंचभूत से बने हैं।

इसी प्रकार तुम्हारे शरीर में मेरे शरीर में एक ही आत्मा है । और तुम किसमें महान हो, यह बात शंकराचार्य ने समझ ली और समझ गए कि यह कोई बच्चा नहीं बल्कि एक महान व्यक्ति है । जो मेरी आंखें खोलने आया है और उनके चरणों में गिर गया। तत्काल उन चांडाल के स्थान पर भगवान शिव प्रकट हो गये। उन्होंने शंकराचार्य के साथ मिलकर उन्हें इस रचना का ज्ञान दिया। उसने उनका अभिमान दूर कर दिया। अगर कुछ कम लगे तो भी कम मत सोचना शंकराचार्य के परमशिव ने समझाया।

इसीलिए ब्र्म्मर्षि सुभाष पत्रीजी किसी से चरण वंदन नहीं लेते। इसका कारण यह है कि उसे लगता है कि 'वह अधिक नहीं है, अन्य लोग कम नहीं हैं'। सब एक समान हैं, इस भावना के साथ वह सभी से केवल 'करचालन' लेते हैं और समानता दर्शाते हैं। तो पता करो। न केवल मनुष्य एक प्रजाति है, पशु-पक्षी और जलीय जीव-जन्तु भी सभी एक हैं। मनुष्य को यह जानना

चाहिए कि सभी भगवान के ही रूप हैं। किसी को भी अत्याचार मत करो। तुम्हें जानना चाहिए कि तुम जो कुछ भी सताते हो, तुम परमेश्वर को सताते हो। किसी को भी मत मारो। उनका मांस मत खाओ। मांस मत खाओ और उनकी हिंसा का कारण मत बनो।

श्री कृष्ण की तरह शिरडी साईंबाबा ने भी कहा था कि मैं आत्मा हूं, और सभी प्राणियों में मौजूद हूं। साई सच्चरित्र अध्याय 44 पृष्ठ 323 'मैं कौन हूँ?' यह बात स्वयं बाबा ने प्रस्तावना में कही है। 'तुम्हें मुझे ढूंढने के लिए कहीं दूर या कहीं जाने की ज़रूरत नहीं है। न केवल आपमें, बल्कि सभी प्राणियों में एक चेतना या अंतरात्मा है। 'वह मैं हूं', इसका एहसास करें और मुझे हर चीज में देखें, अपने आप में नहीं। बाबा के उपरोक्त सन्देश के अनुसार वह स्पष्टतः मैं ही आत्मा हूँ। उन्होंने कहा कि मैं केवल आपमें ही नहीं बल्कि सभी प्राणियों में हूं। इसके अलावा, अध्याय 22, पृष्ठ 170 में, वे कहते है, 'भगवान सभी जीवित चीजों में निवास करता है, यहां तक कि सांप या बिच्छू में भी । इसलिए हमें दयालु होना चाहिए और दूसरे प्राणियों से प्रेम करना चाहिए। अनावश्यक झगड़ों और हत्याओं में शामिल न हों और धैर्य रखें। यह भगवान ही है जो सभी को बचाता है"।

उपरोक्त संदेश में बाबा ने कहा कि किसी भी जीव की हत्या नहीं करनी चाहिए क्योंकि हर चीज में ईश्वर का वास है। बाबा ने ऐसे ही नहीं कहा कि मैं आत्मा हूँ। ऐसा कहा गया था कि जो लोग उनकी शरण में आते हैं, यानी जो आत्मा पर ध्यान केंद्रित करते हैं, उन्हें कोई नुकसान या कष्ट नहीं होगा। अध्याय ३, पृष्ठ २७ में बाबा ने कहा, "अच्छी तरह याद रखो कि मैं सब कुछ जानता कि तुम कहाँ हो और क्या कर रहे हो। मैं सभी दिलों का शासक हूं. वह सबके दिलों में रहते हैं. मैं दुनिया के सभी पशु जीवन मे शामिल हूं। जो कोई अपना ध्यान मेरी ओर लगाएगा उसे कोई हानि या दुख नहीं होगा। जो मुझे

भूल जायेगा माया उसे सजा देगी। कीड़े, चींटियाँ आदि सभी अरबों दृश्यमान जीव मेरे शरीर और मेरे स्वरूप हैं।

बाबा के सन्देश से हमें प्रथम दो प्रश्नों का उत्तर भी ज्ञात हो जाता है। अर्थात हम जानते हैं कि ईश्वर 'आत्मा' है। हम जानते हैं कि वह सभी प्राणियों में विद्यमान है। इसका मतलब है कि हम स्पष्ट रूप से समझते हैं कि वह भी हमारे अंदर है। और तीसरा प्रश्न यह है कि हम अपने अंदर के ईश्वर की ओर कैसे मुड़ें? शामिल कैसे हों? तुम्हें यह पता होना चाहिए। यह बहुत ही महत्वपूर्ण है. कारण यह है कि ईश्वर तक पहुँचने का प्रयास किये बिना कोई भी व्यक्ति किसी भी समस्या या कठिनाई से बाहर नहीं निकल सकता। ईश्वर से जुड़े बिना व्यक्ति कभी भी समस्याओं से हमेशा के लिए छुटकारा नहीं पा सकता यानी मुक्ति नहीं पा सकता। इसलिए मनुष्य को ईश्वर तक पहुंचने का रास्ता पता होना चाहिए।

ऐसा देखा गया है कि कई गुरुओं ने कहते है की पहली दो चीज़ें यानी ईश्वर और 'आत्मा' हैं। वह हर किसी में है। लेकिन बहुत से लोग यह नहीं बता पाते कि जो इसमें है उस तक कैसे पहुंचा जाए। उनका कहना है कि आपको कब तक पूजा-पाठ, भजन-कीर्तन करना चाहिए। याद रखें ईश्वर बाहर नहीं है। वह सबमें है अर्थात हममें है। इसलिए आप चाहे कितनी भी बाहरी पूजा कर लें, आप भगवान तक नहीं पहुंच सकते। ये सभी खोज के लिए उपयोगी हैं। लेकिन 'जो प्राप्त करता है वह खोजने वाले से बड़ा होता है'। इसका कारण यह है कि वह सभी दुखों से हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है। इसीलिए ललिता सहस्रनाम में कहा गया है 'अन्तर्मुख समाराध्य... बहिर्मुख सुदुर्लभ'।

कौवे के मुँह में दांतों की संख्या गिनने की तरह, कई लोग बाहरी दुनिया में भगवान को देखने की कोशिश करते हैं।

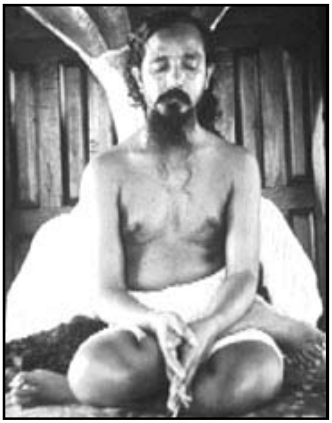

भगवान तक कैसे पहुंचे?

हमारे शरीर भीतर मौजूद ईश्वर तक पहुँचने के लिए हमे क्या करना चाहिए? भगवान कृष्ण ने भगवत गीता में ही हमें यह स्पष्ट कर दिया है। आइए निम्नलिखित श्लोकों पर नजर डालें।

श्लो : ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यतकं पर्युपासते
सर्वत्रगमाचिन्त्यं च कूटस्थमाचलं ध्रुवम (भा.गी.12-3)

श्लो : संन्यम्येनरियाग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रतः (भा.गी.12-4)

भाव :- जिसके पास सभी इंद्रियां हैं और वह इंद्रियों की समता रखता है, जिसके पास सभी जीवित प्राणियों के लिए इच्छा है, जो 'अक्षर पर ब्रम्ह' (आत्मान) पर ध्यान करता है, जिसे इंद्रियों द्वारा इंगित नहीं किया जा सकता है, वह अदृश्य है । यह अविनाशी है, अकल्पनीय, अचल, सर्वव्यापी और शाश्वत है।, वे मुझे प्राप्त करते हैं।

उपरोक्त दो श्लोकों के माध्यम से ईश्वर तक कैसे पहुंचें! (प्राप्त करें) कौन शामिल हो सकता है ? क्या किया जा सकता है? स्पष्ट रूप से कहा। आइए थोड़ा और विस्तार से जानें। उन्होंने विशेष रूप से कहा, 'जिसने इंद्रियों को जब्त कर लिया है' । इसके अनुसार ईश्वर तक पहुंचने से पहले इंद्रियों पर नियंत्रण रखना होगा। यह जानना आवश्यक है कि इंद्रियाँ क्या हैं? मनुष्य के पास दो प्रकार की इंद्रियाँ होती हैं। वे हैं (1) बाह्य अंग, (2) आंतरिक अंग।

बाह्य अंग २ प्रकार के होते हैं। (1) पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, (2) पाँच कर्मा इन्द्रियाँ। इसके अलावा आंतरिक का अर्थ मन है। जैसा कि भगवान कृष्ण ने कहा था, इंद्रियों को नियंत्रित करने के लिए सबसे पहले आंखें बंद करनी होंगी, मुंह बंद करना होगा, हाथों को बांधना होगा और पैरों को भी बांधना होगा। यदि हम ऐसा करेंगे तो हम बाहरी अंगों को अपने नियंत्रण में रखेंगे। ऐसा करना किसी के लिए भी आसान है. लेकिन यह आंतरिक मन को जीतना, बहुत कठिन।

कारण यह है कि जब आंखें बंद होती हैं! तो मन में तरह - तरह के विचार आते है। मन भटकता रहता है. हम जो कहते हैं वह नहीं सुनता. हमारे अधिकार में नहीं रहता है। यदि हम एक बात कहते हैं तो वह दूसरी बात करती है। तरह-तरह के विचार चलते रहते हैं। मन किसी भी परिस्थिति में हार नहीं मानता। लेकिन भगवान कृष्ण विशेष रूप से सभी इंद्रियों पर विजय प्राप्त करना चाहते थे। इसका मतलब यह है कि मन पर भी ठीक से नियंत्रण होना चाहिए। ईश्वर से जुड़ने से पहले ये बहुत जरूरी है. जब तक मन पर काबू नहीं पाया जाता तब तक ईश्वर तक पहुंचना असंभव है। और मन पर काबू पाने के लिए क्या करें?

मन पर काबू पाने का अर्थ है मन को कुछ भी न करने देना। यानी कोई विचार नहीं होना चाहिए. हम आंखों से देखे बिना आंखों को कैसे जीत सकते हैं, बिना बोले मुंह को कैसे जीत सकते हैं और विचारों के बिना मन को भी जीत सकते हैं। इसका अर्थ है मन के साथ कुछ भी न करना। यानि सोचो मत. कुछ इस तरह का मन खाली हो जाना चाहिए. कम से कम नाम और मंत्र का जाप करने से मन तो चल रहा है. मानो हमारे अधिकार में ही न हो. इसलिए मन को खाली कर देना चाहिए। दिमाग को पूरी तरह आराम दें. वह मन पर कब्ज़ा करने की अवस्था है। वह अवस्था भगवान श्रीकृष्ण द्वारा सिखायी गयी

अवस्था है। इन्द्रियों के वशीभूत होने की अवस्था।

यहां देखा जा सकता है कि इंसान कुछ भी कर सकता है, लेकिन मन पर काबू पाना बहुत मुश्किल है। क्योंकि जब कोई अपनी आंखें बंद करता है तो उसके मन में अत्यधिक विचार आते हैं। मन बंदर की तरह इधर-उधर भागता रहता है। यदि इसे ऐसे ही छोड़ दिया गया तो यह कभी फल नहीं देगा। लेकिन वशीभूत होना चाहिए। मन को शांत करें। नहीं लगता। ऐसा होने के लिए, इसे एक आसान और सरल तरीका चाहिए। ब्र्मर्षि सुभाषपत्री हर किसी को मन को नियंत्रित करने का आसान तरीका बता रहे हैं। वह है 'श्वास पर ध्यास का ध्यान'।

इसका मतलब है कि जब कोई अपनी आँखें बंद करता है तो विचार आते हैं। ऐसा सोचते हुए मन को श्वास की ओर लगाना चाहिए। यदि आप ऐसा करते हैं, तो आप फिर से विचारों पर विचार करेंगे। फिर से मन को श्वास की ओर निर्देशित करना चाहिए। ऐसा धीरे-धीरे, धीरे-धीरे करने से...विचार कम होते हैं, यानी मन शांत होता है। धीरे-धीरे विचार कम होते जाते हैं और किसी स्तर पर सभी विचार एक ही अवस्था में रुक जाते हैं। मन अब काम नहीं करता, मन शांत हो जाता है। पूरी तरह से आराम पर. वहाँ मन है. लेकिन इसकी कोई भूमिका नहीं है। वह मन हमारी स्वमित्व की अवस्था है। श्रीकृष्ण परमात्मा की बताई हुई स्थिति। जो कोई भी इस अवस्था का अभ्यास करेगा उसे पता चल जाएगा कि यह एक 'सांस पर ध्यान' के अलावा किसी भी प्रयास से संभव नहीं है। कारण यह है कि नाम, मंत्र और रूप के कारण मन काम करता रहता है। लेकिन मन खाली नहीं है। इसलिए सांस लेने पर ध्यान देना जरूरी है।

यदि सभी इंद्रियों पर काबू पा लिया जाए तो हम ईश्वर का ध्यान कर सकते हैं यानी आत्मा का ध्यान कर सकते हैं। कारण यह है कि यदि इन्द्रियाँ

काम कर रही हैं तो ध्यान आत्मा पर नहीं रहता। कारण यह है कि आत्मा मनुष्य की इन्द्रियों से दृश्यमान नहीं है। अर्थात ईश्वर को केवल इंद्रियों से ही नहीं बल्कि मन से भी महसूस नहीं किया जा सकता। कारण यह है कि वह निराकार है। अर्थात ईश्वर का कोई रूप नहीं है। कोई गति नही है। इतना ही नहीं, वह शाश्वत है। वह जो सारी सृष्टि में व्याप्त है। इसके अलावा वह अक्षर परब्र्म है जिसका अर्थ है अविनाशी, शाश्वत अदृश्य। इसलिए, उनका ध्यान करने के लिए, उनका ध्यान करने से पहले इंद्रियों पर काबू पाना होगा। इसका अर्थ है इन्द्रियों का प्रयोग न करना। उस अवस्था तक पहुंचने के लिए आपको 'सांस पर ध्यान' करना होगा। उपरोक्त श्लोक में भगवान कृष्ण ने कहा है कि जो लोग इस प्रकार ध्यान करते हैं वे मुझे प्राप्त करेंगे। इसका मतलब है कि आप जान सकते हैं कि आप ईश्वर तक पहुंच सकते हैं। ऐसे जुड़ने वालों का जीवन धन्य है। इसका कारण स्वयं भगवान ने निम्नलिखित श्लोक में दिया है।

श्लो : आब्रह्म भुवना लोकः पुनर्वर्तिनोर्जुन ?
मामुपेत्य तु कौनेय पुनर्जन्म न विद्यते? (भा.गी.8-16)

भावः- हे अर्जुन! यदि तुम उन ब्र्मलोक आदि लोकों में पहुँचकर लौट आओगे (अर्थात मुझ तक पहुँच जाओगे) तो फिर लौटकर आओगे। पैदा होना! (आप पृथ्वी पर आएंगे)। लेकिन जो लोग मे रहता है, वहाँ तक पहुंचते हैं, उनका दोबारा जन्म नहीं होगा। उन्हें बहुत खुशी मिलेगी। वे हमेशा के लिए दुख से मुक्त हो जाएंगे। इससे बड़ा कुछ भी नहीं है जो एक इंसान कर सकता है) इस धरती पर प्राप्त करें। इसलिए ईश्वर तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। यानी "ध्यान" करना चाहिए।

ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिए भगवान ने उपरोक्त श्लोक में कहा है कि व्यक्ति को ध्यान के साथ-साथ कुछ बातों का पालन भी करना चाहिए। उन्होंने जो कहा वह यह है कि सभी के प्रति सधनुभूति होना चाहिए। हर किसी

और हर चीज के प्रति समाभाव होना। याद रखें हमारा व्यवहार हमारी भावनाओं को दर्शाता है। इसका कारण यह है कि हमारा व्यवहार हमारी भावनाओं पर निर्भर करता है। स्वाभाविक रूप से दुनिया में लगभग हर किसी का व्यवहार अलग-अलग होता है। अर्थात वह अलग जाति का है, वह अलग धर्म का है, वह अलग क्षेत्र का है, वह अलग देश का है, यह सोचकर कि मैं हिंदू हूं और वह मुसलमान है। मैं इस देश का हूं, वे हमारे देश का नहीं। हम सोच रहे हैं, नफरत कर रहे हैं, लड़ रहे हैं. यानी हम सबके प्रति समानता नहीं दिखा पा रहे हैं। हम यह नहीं सोच सकते कि हर कोई एक जैसा है।

इतना ही नहीं हम अभी भी कई चीजों में समानता नहीं दिखा पा रहे हैं. न केवल हमारे पहनने और सजने-संवरने वाले कपड़े, बल्कि आभूषण भी विशिष्टता दर्शाते हैं। मुझे लगता है कि अलग-अलग लोग अलग-अलग होते हैं, अगर ऐसा है तो ऐसा लगता है कि हमारे मन में सभी के प्रति समानता नहीं है। देखिए, कुछ लोग बिंदी डालते हैं, कुछ लोग बिंदी उतार देते हैं। कुछ लोग बुर्का पहनते हैं। इसका मतलब है कि वह अलग है और मैं अलग हूं, है ना? क्या आप इस सत्य को समझ गए हैं कि सब कुछ एक ही है और सभी ईश्वर का रूप हैं और सबमें वही एकमात्र ईश्वर है? समानता का प्रदर्शन किया गया है।

तो कुछ लोग अपने हाथों में धागे, गले में अपनी पसंद की चेन और उंगलियों में अंगूठियां पहनते हैं। ऐसा करके वे यह अहसास जता रहे हैं कि मैं अमुक ग्रुप का हूं। उनका अलग है और हमारा अलग है। और कुछ बैंगनी वस्त्र पहनते हैं। एकरूपता दिखाए बिना विशेष विशेषताएं खींची जाती हैं जैसे कि सब कुछ अलग है। चोटी पहनी जाती है. क्या इसका मतलब यह है कि कोई समानता नहीं है? वह पोशाक लो! व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि वह चाहे कितनी भी साधना और ध्यान साधना कर ले, वह भगवान तक नहीं पहुंच

सकता। कारण यह है कि ईश्वर के लिए सभी एक समान हैं। उसके लिए सब कुछ बराबर है। क्योंकि वह कारण है। इसीलिए भगवान कृष्ण समभाव रखना चाहते थे।

उन्होंने एक और बात भी कही। वह सभी प्राणियों की भलाई करने में रुचि दिखाना चाहता है। कारण कि वे भी उन्हीं के स्वरूप हैं। परन्तु संसार में वे अपने को मनुष्य और पशु समझते हैं, और उन पर अत्याचार करते हैं, उन्हें मार डालते हैं और उनका मांस खाते हैं। उन्हें नर्क दिखाया जा रहा है. अर्थात जैसा परमेश्वर ने कहा, वे उनका भला नहीं कर रहे, और उन पर ज़ुल्म कर रहे हैं। हम रक्षा करना बंद कर देते हैं और खाते हैं। उनके साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है. ऐसे लोग यानि जो मांस खाते हैं और जो जानवरों पर हर तरह की हिंसा करते हैं, वे चाहे कितनी भी साधना, पूजा और ध्यान कर लें, उन्हें ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती। यह भगवान कृष्ण का संदेश है।

इसलिए जो 'सांस पर ध्यान' के माध्यम से इंद्रियों पर कब्ज़ा करता है और विशिष्टता के बिना सभी के लिए समानता दिखाता है! भगवान का संदेश है कि जो सभी प्राणियों की भलाई करते हैं अर्थात उन्हें हानि पहुँचाए बिना उनकी रक्षा करते हैं तथा ईश्वर का अर्थात आत्मा का ध्यान करते हैं, उन्हें ईश्वर की प्राप्ति अवश्य होती है और उस तक पहुँचते हैं। इस प्रकार जो लोग ईश्वर को प्राप्त कर लेते हैं वे मुक्त हो जाते हैं। जानिए, हिंसा का त्याग करना और ध्यान करना ही ईश्वर तक पहुंचने का मार्ग है।

हमें अपने मंदिर में मूर्ति तो अच्छी लगती है लेकिन अपने शरीर में भगवान हमें पसंद नहीं आते। क्योंकि मूर्ति प्रकट होती है। क्योंकि शरीर में स्थित ईश्वर को देखा नहीं जा सकता।

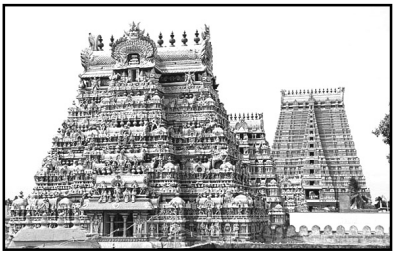

मंदिर क्यों?

यहां स्वाभाविक रूप से हर किसी को संदेह है। और अगर भगवान तक पहुंचने का रास्ता 'ध्यान' है तो ये मंदिर परंपरा क्यों आई? इसका परिचय किसने दिया? बुजुर्गों के रूप में शुरू हुई थी मंदिर परंपरा? यदि सभी बुजुर्गों और विद्वानों को इससे कोई प्रयोजन नहीं था तो उन्होंने यह परम्परा क्यों डाली? इस पर कोई भी संदेह कर सकता है। इसके अलावा, कई विद्वान और गुरु पीढ़ियों से चली आ रही इस परंपरा का पालन और प्रोत्साहन कर रहे हैं। और वे सभी प्रोत्साहित क्यों कर रहे हैं? किसी को भी यह संदेह होना स्वाभाविक है।

इसके अलावा, मंदिर परंपरा में, यदि आप पहाड़ियों पर मंदिर तक पैदल जाते हैं, तो इसे पुण्यम कहा जाता है। प्रदिक्षणों को योग्यता कहा जाता है। सुबह-सुबह मंदिर के कुंड या पास की नदी में स्नान करना पुण्यम कहलाता है। साष्टांग प्रणाम को पुण्यम कहा जाता है। शठगोप का सेवन करना पुण्यम कहलाता है। हुंडी में उपहार रखना पुण्यम कहलाता है। इसके अलावा प्रसाद खाने को पुण्यम कहा जाता है। मूर्ति के दर्शन करना पुण्यम कहलाता है। और क्योंकि ये सभी गुण हैं, हर कोई इनका अभ्यास कर रहा है, हर कोई इस परंपरा का पालन कर रहा है।

और इनमें क्या खूबी है? तो जैसा कि पहले बताया गया है, हमें कितना लाभ मिलता है? तुम्हें यह पता होना चाहिए। हमने सीखा है कि इसका कारण यह है कि 'पुण्य' का अर्थ वह लाभ है जो हमें मिलता है। लेकिन याद रखें कि प्राचीन बुजुर्गों ने बिना किसी लाभ के ऐसी परंपरा नहीं शुरू की होगी। हर कोई इसका पालन नहीं करता. तो आइए जानें कि इनसे मिलने वाला

'पुण्य' क्या है और लाभ क्या है। मंदिर परंपरा में बहुत सारे अर्थ और निहितार्थ छुपे हुए हैं। ऐसी परंपरा बिना किसी फायदे के नहीं शुरू की जाती. आइए इसके बारे में थोड़ा और विस्तार से जानें।

समाज पर नजर डालें तो अलग-अलग तरह के लोग हैं। यानी अलग-अलग व्यवहार वाले लोग होते हैं. कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो डकैती, अपराध और हत्याएं करते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो हिंसा और उपद्रव करते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो चालबाज़ी और धोखाधड़ी करते हैं। वे उनके हैं। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो बलात्कार करते हैं। कई लोग पीड़ित हैं. कुछ लोग अपने फायदे के लिए दूसरों को नुकसान और कष्ट पहुँचाकर नरक में भी जाते हैं। इसका खामियाजा दुनिया को भुगतना पड़ रहा है. उनके कारण विश्व में कोई भी शांति से वंचित नहीं रहेगा। ऐसे लोग पापी कहलाते हैं।

साथ ही कुछ लोग सिर्फ अपने फायदे की परवाह करते हैं। दूसरों को नुकसान न पहुंचाएं। वे संघर्ष करते हैं। वे अपनी कमाई का ख़्याल ख़ुद रखते हैं। दूसरों की परवाह मत करो. दूसरों के झगड़ों में न पड़ें। उनके कारण दूसरों को कोई लाभ या हानि नहीं होती। दूसरे अपना लाभ देखते हैं और दूसरों को भी लाभ पहुँचाना चाहते हैं। दूसरों की सेवा करना। दान करें और अच्छे कर्म करें। कई अन्य लोग उनसे लाभान्वित होते हैं। उनको पवित्र आत्मा कहा जाता है।

और कुछ लोग अपना स्वार्थ पूरी तरह से त्याग कर दूसरों की सेवा करते हैं और अच्छा करने की कोशिश करते हैं। इसका मतलब है कि वे अपनी कठिनाइयों को गिनाए बिना सभी को खुश करने का प्रयास करते हैं। उन्हें महात्मा कहा जाता है. इस प्रकार यदि हम संसार को देखें तो हमें मनुष्यों में विभिन्न व्यवहार दिखाई देते हैं। लेकिन सब कुछ मानवीय है. और वे अलग-अलग व्यवहार क्यों करते हैं? अगर कुछ लोग उपकार कर रहे हैं! कुछ अन्य

लोग बुराई क्यों कर रहे हैं? अगर कुछ लोग सेवा कर रहे हैं! और कुछ लोग ज़ुल्म क्यों कर रहे हैं? कुछ लोग शेयर कर रहे हैं! कुछ लोग क्यों लूट रहे हैं? कोई सम्मान कर रहा है तो कोई अपमान? कोई नहीं समझता कि समाज ऐसा क्यों है। जो लोग गलतियाँ करते हैं वे चाहे कितना भी कहें, नहीं बदलेंगे। बदलेगा नहीं ऐसी स्थिति के कारण न केवल समाज में बल्कि संसार में भी बहुत से लोग नरक का अनुभव कर रहे हैं और बेचैनी से जी रहे हैं। उन्हें समझ नहीं आ रहा कि उनका परिवार ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है। आप कब तक भगवान से हाथ जोड़कर प्रार्थना करने के अलावा कुछ नहीं कर सकते। लेकिन उन्हें उम्मीद है कि उनका व्यवहार बदल जाए तो बेहतर होगा।

इस प्रकार समाज में भलाई करने वालों, सेवा करने वालों और बांटने वालों की दुनिया में सभी को सुख मिलता है। हर कोई शांति और खुशी से रह सकता है। परन्तु जो लोग बुरे काम करते हैं, उनके कारण वे अशांति में रहते हैं, और हिंसा करते हैं। जो लोग संसार में अच्छे कर्म करते हैं, उनके कारण, जो लूटपाट करते हैं, उनके कारण संसार में सारे दुःख मिलते हैं, और कुछ बुरे कर्म करते हैं। लेकिन अब दुनिया में इनका प्रतिशत ज्यादा दिखाई दे रहा है। यही कारण है कि आज संसार में इतना दुःख है। ऐसे लोग अपना व्यवहार बदल भी लें तो नहीं बदलेंगे। बदलेगा नहीं इसका मुख्य कारण भगवान श्रीकृष्ण ने जो कहा है। यही उनकी गुणवत्ता है. गीता के इस श्लोक के माध्यम से कहा गया है कि लोगों का आचरण उनके गुणों के कारण होता है।

श्लोः प्राकृते रगुणसमुधा सज्जन्तो गुणकर्मसु।

तनाकृत्सनाविदो मन्दा स्क्रित्सनविन्न विचलयेत ? (भा.गी.3-29)

भावः- जो लोग प्रकृति के गुणों पर मोहित हो जाते हैं, वे गुण और कर्म में रुचि लेने लगते हैं। ऐसे अल्प बुद्धिमान व्यक्तियों को उन लोगों के बहकावे में नहीं आना चाहिए जो आत्म-ज्ञानी हैं। इसका मतलब यह है कि संसार में

मनुष्य 4 प्रकार के गुणों अर्थात तमोगुण, रजोगुण, सत्त्वगुण और निर्गुण के साथ विद्यमान है। यह कुदरती हैं। यदि उनमें कोई गुण होगा तो उनका आचरण भी उसी के अनुरूप होगा। इसका मतलब है कि वे जो काम करते हैं वह उनके चरित्र का अनुसरण करते हैं। अतः तमोगुण वालों का आचरण एकतरफ़ा होता है। रजोगुण में इनका व्यवहार अलग-अलग होता है। जो लोग सात्विक गुण में होते हैं उनका आचरण एक अन्य प्रकार का होता है। साथ ही यह भी जानना चाहिए कि निर्गुण अवस्था वालों का आचरण इन सबसे भिन्न होता है।

उनका व्यवहार उनकी गलती नहीं है। इसका कारण उनकी गुणवत्ता है। इसलिए, जो लोग आत्म-जागरूक हैं, यानी जो यह जानते हैं, वे ऐसा व्यवहार करने वालों की आलोचना, दोषारोपण या उन्हें बदलने का प्रयास नहीं करते हैं। क्योंकि जब तक उनका चरित्र नहीं बदलता तब तक वे अपना व्यवहार नहीं बदलते। इसीलिए आत्म-साक्षात्कारी लोग यानी योगी और संत अपने चरित्र को बदलने की कोशिश करते हैं। लेकिन उन्हें अपने व्यवहार को बदलने और बेहतर बनने की सलाह नहीं देते हैं। इसका कारण यह है कि वे जानते हैं कि कोई भी सलाह उनके चरित्र और उनके व्यवहार को नहीं बदलेगी।

इसलिए, कुत्ते की टेढ़ी पूँछ को ठीक करने की इच्छा करना उतना ही मूर्खतापूर्ण है जितना कि मनुष्य के व्यवहार को सुधारे बिना उसे बदलने की इच्छा करना। उनके गुण बदल जाते हैं लेकिन उनका व्यवहार नहीं बदलता। दुनिया में शांति नहीं है. जान लें कि मनुष्य में तमो गुण और रजो गुण होने के कारण मनुष्य का व्यवहार संसार के विपरीत होता है। क्योंकि विश्व का बहुसंख्यक वर्ग इन्हीं श्रेणियों में है। बहुसंख्यक का व्यवहार समस्त विश्व के लिए हानिकारक है।

और अगर उन सबका व्यवहार बदल जाए तो क्या बदल जाएगा? निश्चित रूप से नहीं बदलता। आप कितना भी अच्छा कह लें, कितनी भी

नैतिकता की बात कह लें, वो नहीं बदलेंगे। चूँकि कारण की गुणवत्ता नहीं बदली है। और गुणवत्ता कैसे बदलती है? क्या गुणवत्ता में बदलाव की कोई संभावना है? यह वहां है लेकिन इतना आसान नहीं है। ब्रह्मर्षि पात्री कहते हैं कि किसी भी मनुष्य को एक गुण से दूसरे गुण में, यानी तमोगुण से रजोगुण में बदलने में लगभग 100 से 150 जन्म लगते हैं। अर्थात उन्होंने कहा कि प्रत्येक जन्म में प्रत्येक व्यक्ति की गुणवत्ता में केवल एक मिलीमीटर का परिवर्तन होता है।

इसीलिए कई लोग कभी-कभी कहते हैं, 'वह इस बुद्धि के साथ पैदा हुआ था, इसे टुकड़े-टुकड़े करने पर भी यह दूर नहीं हो सकती।' इसका मतलब यह है कि मनुष्य के स्वभाव को स्वाभाविक रूप से बदलने के लिए कई जन्म लेने पड़ते हैं। जब तक वह नहीं बदलेगा, उसके कर्म नहीं बदलेंगे. व्यवहार नहीं बदलता. अच्छा नहीं है। स्वाभाविक रूप से, जो लोग तमोगुण और रजोगुण में हैं उनके कर्म लोककंटक हैं, यानी सभी को नुकसान पहुंचाने वाले हैं। लेकिन जो लोग सात्विक गुण में हैं उनके कर्म संसार के लिए अच्छे हैं, यानी वे सभी को लाभ पहुंचाते हैं। इसलिए, यदि हर कोई अच्छा बनना चाहता है, अगर उनके कार्यों से दूसरों को लाभ होता है या खुशी मिलती है, तो हर किसी को सात्विक गुण बनना चाहिए।

मनुष्य के गुणों को बदलने के लिए, उनमें शीर्घता से परिवर्तन लाने के लिए, उन्हें संसार में अच्छे कर्म कराने के लिए, उनमें से तमोगुण और रजोगुण को हटाकर सात्विक गुण में लाने के लिए बड़े-बुजुर्गों, संतों और विद्वानों ने इस मंदिर परंपरा की शुरुआत की।

इस मंदिर परंपरा में उनके द्वारा शुरू की गई सभी रीति-रिवाज और प्रथाएं मनुष्य की गुणवत्ता को बदल देती हैं। इसके अलावा इनमें ऐसे तरीके भी हैं जो इंसान को न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक रूप से भी फायदा पहुंचाते

हैं। वे विशेष रूप से शरीर के स्वास्थ्य और मन की शांति के लिए अच्छे हैं। समाज को लाभ पहुंचाने के उपाय भी हैं. यदि हम सभी मंदिर परंपराओं का अवलोकन करें तो हम इसे आसानी से समझ सकते हैं।

इससे आम लोगों और गरीबों को फायदा होगा... ये लोग ये काम करो. वो मुनाफ़ा होगा... वो काम करो, कहने से ज़्यादा महत्व नहीं देंगे। दिलचस्पी नहीं दिखाएंगे। इसीलिए 'सदाचार' शब्द का प्रयोग उन विद्वानों और बुजुर्गों द्वारा किया जाता था। क्योंकि वे उनके कमजोरी जानते थे। क्योंकि 'सदाचार' शब्द का प्रयोग किये है। मतलब है कि कोई व्यक्ति उस काम को करने के लिए बहुत इच्छुक है। वे कुछ भी करते हैं बिना यह सोचे कि 'पुण्य' आएगा। इसलिए विद्वान 'पुण्य' शब्द जोड़ने का कारण यह है कि मनुष्य उस कार्य को महत्व देते हैं। हमें विशेष रूप से याद रखना चाहिए कि मंदिर परंपरा केवल मनुष्य के गुणों को बदलने के लिए है ताकि परोपकारी कार्य उनसे किए जा सकें। ऐसा करने से कम जन्मों में ही उनकी गुणवत्ता बदल जायेगी। तभी वे संसार का कल्याण करेंगे। उपयोगी हो जाएगा।

याद रखें कि किसी भी इंसान को विशेष रूप से अपने चरित्र को बदलने का प्रयास करना चाहिए। तभी वे अच्छे कार्य करेंगे। तो वे अच्छे हो जाते हैं. साथ ही दूसरों की भलाई भी करते हैं। अच्छा करने से अपना और दूसरों का भला हो सकता है। एक बार फिर याद रखें - 'कपड़ों को बदलने की ज़रूरत नहीं है, बल्कि गुणों को बदलने की ज़रूरत है'। इसीलिए सत्य साईं बाबा कहते हैं, 'तुम्हें कपड़े नहीं बदलने हैं, तुम्हें गुण बदलने हैं।' . यानी उन्होंने साफ कहा कि गुणों में बदलाव जरूरी है।

इसके अलावा वीरब्र्मेन्द्रस्वामी ने भी कहा कि - हमारे नदी स्नान और समुद्र स्नान में कोई योगदान नहीं है। गंगा तीर्थ या मंदिर में तीर्थ पीने से भी कोई फल नहीं मिलता। इतना ही नहीं, मन से किए गए मंत्रों का कोई फल नहीं

मिलता, बल्कि तन से किए गए तंत्रों का कोई फल नहीं मिलता। वीरब्र्म्मेन्द्रस्वामी ने कहा है कि जिसका चरित्र बदल जाता है.. उसका चरित्र निर्गुण हो जाता है।

यहां तक कि योगी वेमना ने भी कहा कि - चाहे आप कितनी भी पूजा करें, जब आपका मन शुद्ध नहीं होता है यानी जब मन अच्छा नहीं होता है यानी जब मन की गुणवत्ता नहीं बदलती है तो क्या फायदा है? यानी साफ कहा गया है कि गुणवत्ता बदलनी चाहिए। उनका कहना यह है कि बर्तन को शुद्ध किए बिना चाहे कितना भी बढ़िया पकवान बनाया जाए, वह पक्वान बेकार है। उसी प्रकार आत्मा को शुद्ध किए बिना किए गए कर्मकांड भी निंदित ही होंगे। साथ ही वेमना ने कहा कि जब मन शुद्ध नहीं है, तो वे सभी पूजाएं बेकार हैं।

भगवद गीता में भगवान कृष्ण ने भी कहा कि -

श्लो : त्रिगुण्य विषय वेद निर्रेगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्तवो नित्यसत्त्वस्थ निर्योगक्षेम आत्मवान ? (भा.गि.2-45)

भावः- वेदों में केवल त्रिगुण संबंधी बातों का ही उल्लेख किया है। लेकिन अर्जुन, त्रिगुणों को छोड़ो और निर्दुनि बन जाओ। द्वंद्वों से रहित व्यक्ति के रूप में आत्म-जागरूक बनो, जो यौगिक सुखों पर ध्यान केंद्रित किए बिना, लगातार शुद्ध सत्य की शरण लेता है। इस प्रकार भगवान ने यह भी कहा कि गुणों में परिवर्तन होना चाहिए।

उपरोक्त संदेशों से यह स्पष्ट है कि किसी को अपना चरित्र बदलने की जरूरत है। ब्र्म्मर्षि पत्री कई जन्मों की आवश्यकता के बिना किसी के चरित्र को बदलने का तरीका सिखाती है। वह तरीका है 'सांस पर ध्यान'। पत्रीजी स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जो लोग ध्यान करते हैं वे कई जन्मों की आवश्यकता के बिना इसी जन्म में रजोगुण में बदल जाएंगे, और जो लोग रजोगुण में हैं वे सात्विक में बदल जाएंगे। यह जानना चाहिए कि "ध्यान" गुण परिवर्तन के लिए है। हर किसी को पता होना चाहिए कि यह बेहतरी के लिए है।

वैसे भी चाहे कितने भी लोग कहें, ख़ास तौर पर किसी का चरित्र तो बदलना ही चाहिए। तो आइए विशेष रूप से पहले गुणों के बारे में जानें। आइए जानें कि मूल गुणो को क्यों बदला जाना चाहिए। जैसा कि भगवान कृष्ण ने कहा था, सभी मनुष्यों में तीन गुण होते हैं अर्थात सत्व, रज और तमो। उनका व्यवहार उनकी विशेषताओं पर निर्भर करता है। खासकर तमोगुण और रजोगुण ऐसे गुण हैं जो किसी को भी नुकसान पहुंचा सकते हैं। लेकिन सत्त्व लाभकारी गुण है. क्योंकि इन तीन गुणों के साथ वे कैसा व्यवहार करते हैं! रामायण में ब्र्ह्मर्षि वाल्मिकी ने इनके आचरण की व्याख्या की है। जैसा कि रामायण में वाल्मिकी द्वारा वर्णित है, तमोगुण वाले लोग कुंभ कर्ण की तरह खाने, पीने और सोने को अधिक महत्व देते हैं। इसी प्रकार जो लोग रजोगुण में होते हैं वे भी रावणासुर की तरह अहंकार करके सभी पर प्रभुत्व दिखाते हैं। इसी प्रकार, जो सात्विक गुण वाला है वह विभीषण की तरह, सही और गलत, न्याय और अन्याय, अच्छा और बुरा सोचता है।

तमोगुण में एक प्रकार का आलसी होता है, वह विचार नहीं करता । रजोगुण में अभिमान है और वह उग्र है। लेकिन सोचो. जो लोग सत्व गुण के होते है, थोड़े नम्र होते हैं उनके पास बुद्धि होती है। इसके बारे में सोचो। एक ही विषय में अर्थात सीता के अपहरण करने का बाद तीनों का व्यवहार तीन प्रकार का होता है। कुम्भकर्ण ने अपना काम संभाल लिया ताकि सीता को अपहरण करे तो मुझे कोई फर्क न पड़े। रावणासुर ने कहा कि यह राजधर्म है, मैं राजा हूँ। इसलिए कुछ भी कर सकता हूं। लेकिन सात्विक स्वभाव के विभीषण ने धर्म को शिक्षा दी कि, दूसरो की पत्नी को अपहरण नहीं करना चाहिए।

यहां देखा जा सकता है कि कुम्भकर्ण ने तमोगुण में बिना सोचे समझे आदेश के अनुसार कार्य किया और नष्ट हो गया। रावणासुर ने रजोगुण के

अभिमान के कारण सीता को नहीं छोड़ा और राम से युद्ध किया और नष्ट हो गया। लेकिन विभीषण, जो सात्विक गुण के थे, उन्होंने धार्मिक गुणों के बारे में सोचा और धर्म का सहारा लिया और अंततः लाभ प्राप्त किया और राजा बन गए। इससे जो भी सात्विक गुण में होगा उसे ज्ञान प्राप्त होगा। स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं कि क्या नहीं करना है? किसे करना जरूरी है? अंततः, विवेक बढ़ता है। सद्गुणों की शिक्षा दी जाती है। इस प्रकार विभीषण को स्वयं लाभ उठाया। फिर वह सभी के लिए शांति और खुशी लेकर आए। परंतु रजोगुण पर अभिमान करने वाला रावणासुर स्वयं नष्ट हो गया। वह सबके विनाश का कारण बन गया।

तो पता करो, यदि कोई ऐसा कुछ कर रहा है जिससे सभी को नुकसान होता है, तो यह उनकी गुणवत्ता के कारण है। जब तक ऐसे लोग हैं, दुनिया में शांति नहीं होगी। इसलिए, जिन महानुभावों, महात्माओं और ऋषियों ने यह सब महसूस किया, उन्होंने मानव के हानिकारक गुणों को बदलने के लिए इस मंदिर परंपरा की शुरुआत की। एक बार फिर याद रखें कि महापुरुष जो कुछ भी करते हैं, दुनिया को जो कुछ देते हैं, उसमें कुछ न कुछ लाभ जरूर होता है। लेकिन जो लाभ हम उम्मीद करते हैं और चाहते हैं वह नहीं मिलता। यदि हमें इसका एहसास हो जाए तो हम स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं कि इस मंदिर परंपरा से हमें क्या लाभ मिल सकता है।

मंदिर परंपरा के अनुसार किए गए ये सभी कार्य केवल गुण बदलने के लिए हैं। वे मोक्ष नहीं देते, इच्छाएं पूरी नहीं करते, दुख दूर नहीं करते। यह जानना चाहिए कि पाप दूर नहीं होते। तो आइए जानते हैं कि मंदिर परंपरा में किस तरह का 'पुण्य' यानी किस तरह का लाभ मिलता है।

'यदि आप इस भावना ये ध्यान करे कि देवता अलग-अलग हैं,
तो आपको यह अनुभव होता है कि सब कुछ एक है,
जैसे नमक पानी में घुल जाता है और एक हो जाता है।

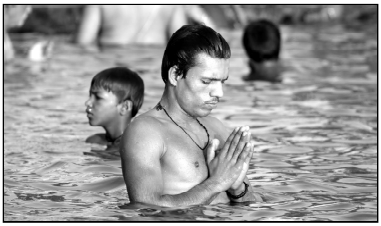

स्नान

सुबह-सुबह मंदिर के कुंड में या आसपास की नदियों में या समुद्र में स्नान करना शुभ माना जाता है। विशेषकर कार्तिक माह में वे सुबह जल्दी स्नान कर मंदिर जाते हैं। स्वाभाविक रूप से कई लोग आलस्य के कारण सुबह जल्दी नहीं उठ पाते हैं। वे बहुत देर होने तक सोते हैं। ऐसा आलस्य तमोगुण का लक्षण है। ज्ञात हो कि आलसी किसी के भी जीवन में एक हानिकारक गुण है। कारण। जो काम जरूरी हैं फिर भी वे कुछ नहीं करेंगे। वे बैठते हैं और समय बर्बाद करते हैं। बुद्धि का प्रयोग नही करते, नही सोचते, तो ये अपने जीवन में बहुत कुछ खो देंगे। आख़िर में तो जान ही चली जायेगी. यही बात भगवान ने भगवत गीता में निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से कही है।

श्लो : अप्राकाशो प्रवृत्तिश्च प्रमारो मोह एवच
तमस्येतानि जयन्ती विवृद्धे कुरुनार्दना (भा.गि.14-13)

भावः- कुरु वंशीय हे अर्जुन! तमोगुण बढ़ने पर मनुष्य मूर्ख (बौद्धिक अवसाद), आलस्य, प्रमाद, अज्ञान (मूर्खता या अत्यधिक ज्ञान) हो जाता है। इसीलिए विद्वानों ने उन्हें आलस्य से छुटकारा पाने के लिए पुण्य के तौर पर पूरे कार्तिक महीने में सुबह जल्दी उठकर स्नान करने को कहा। उन्होंने कहा कि अगर तुम ऐसा करोगे तो तुम्हें पुण्य मिलेगा. अगर आप सुबह जल्दी उठकर महीनों नहा लें तो कोई भी व्यक्ति आसानी से आलस्य से छुटकारा पा सकता है। वे सुबह जल्दी उठते हैं. जो लोग सुबह जल्दी उठने के आदती होते हैं वे सुबह अपना काम करते हैं। नहीं तो वे ऐसे ही सोते हुए कई काम नहीं कर पाएंगे। तो वे हार जाते हैं।

इस प्रकार कार्तिक स्नान के पुण्य का अर्थ है तमो गुण अर्थात आलस्य का निवारण। साथ ही, बुजुर्गों को फिर से आलस आने के इरादे से हर साल कार्तिक स्नान करने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार धीरे-धीरे व्यक्ति तमो गुण पर विजय पा सकता है। इसके अलावा यही कारण भी है कि ज्यादातर मंदिर पहाड़ियों और टीलों पर बनाए जाते हैं। अगर कोई ऐसे मंदिर में जाना चाहता है तो उसे बड़ी मुश्किल से सीढ़ियां चढ़कर मंदिर तक पहुंचना पड़ता है। कई बार कठिन चढ़ाई करने से उनमें आलस्य दूर हो जाएगा।

प्रदक्षिणा

साथ ही हर बार मंदिर के चारों ओर 108 बार प्रदक्षिणा करना, अंग प्रदक्षिणा करना सभी आलस्य से छुटकारा पाने की क्रियाएं हैं। अन्यथा, कुछ

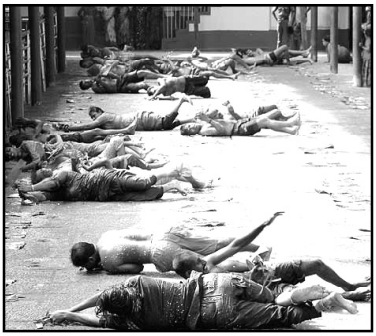

लोगों को आराम करने और कुछ न करने की आदत हो जाती है। वे संघर्ष नहीं करते, वे आगे नहीं बढ़ते। ऐसे लोग मंदिर के आसपास भविष्यवाणी कर रहे हैं कि कुछ आएगा और जो वे चाहते हैं वही होगा। लेकिन इतनी मेहनत और प्रदर्शन से उनमें विशेषकर आलस्य दूर हो जाएगा। सारा काम अच्छे से हो जायेंगे। वही प्रदक्षिणा से उत्पन्न पुण्य का अर्थ है लाभ। कुछ जन्म पुण्य के नाम पर करने से उनमें तमोगुण नष्ट हो जाता है। रजोगुण में प्रवेश करता है।

सभी योगी ध्यान कहते हैं - वे जो करते हैं वह ध्यान है - ध्यान का अर्थ है श्वास पर ध्यान।

साष्टांग प्रणाम, शठगोपा

रजोगुण भी किसी के लिए हानिकारक होता है। भगवान कृष्ण निम्नलिखित भजन में उन लोगों के व्यवहार के बारे में बताते हैं जो रजोगुण में हैं।

श्लो : लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ।। (भा.गि.14-12)

भावः- हे भरत जाति में श्रेष्ठ अर्जुन! रजोगुण बढ़ने पर मनुष्य में लोभ, वर्जित कर्मों का आरंभ, मन की शांति का अभाव (इंद्रिय संयम का अभाव) और आशा उत्पन्न होती है। जैसा कि भगवान ने कहा है, जो लोग रजोगुण में हैं वे अपने मन की शांति खो देते हैं क्योंकि वे अहंकारी होते हैं और ऐसे काम करते हैं जिनके लिए उन्हें लालच नहीं करना चाहिए। वे नष्ट हो जायेंगे। वे दूसरों को नुकसान पहुंचाएंगे । इसलिए मनुष्य को इस बुराई से भी छुटकारा पाना चाहिए। इससे बाहर निकलने के लिए पुराने जमाने के बुजुर्गों ने मंदिरों में "पुण्यम" के नाम पर कुछ पद्धतियां शुरू कीं।

देखिये, कोई भी व्यक्ति कितना भी अहंकारी क्यों न हो, जिसके पास बहुत सारा पैसा हो, न कि वह जो बड़े पदों पर हो, न वह जो सत्ता में हो, न वह जो बड़ी नौकरियों में हो, वह जब मंदिर जाता है तो अपना अहंकार भूल जाता है। स्वाभाविक रूप से जिन्हें सभी झुकते हैं वे स्वयं झुकते हैं। साष्टांग प्रणाम करता है। इसके अलावा शठगोप को लेने के लिए सभी लोगों को सिर झुकना पड़ता है। चाहे वे कितने भी महान क्यों न हों, सिर झुकाकर भगवान

के चरणों में झुकते हैं। इस तरह का काम करने से उनका घमंड कम हो जाता है। तो धीरे-धीरे कुछ जन्मों तक रजोगुण भी नष्ट हो जाता है। सात्विक गुण प्रवेश करता है। इस प्रकार शठगोपम और साष्टांग प्रणाम से जो पुण्य मिलता है उसका अर्थ है कि उनमें अभिमान को कम करना और रजोगुण को दूर करना है। इसके अलावा ये सब करने से कोई पुण्य या करोड़ों की प्राप्ति नहीं होगी, मुश्किलें ख़त्म नहीं होतीं. इच्छाएं पूरी नहीं होतीं ।

किये हुए पाप दूर नहीं होंगे। इसके कारण, कुछ जन्मों में, उनका व्यवहार बदल जाता है क्योंकि वे धीरे-धीरे रजो गुण को खो देते हैं और सात्विक गुण में प्रवेश कर जाते हैं। किये हुए पाप नहीं मिटते। लेकिन इनके कारण कुछ जन्म धीमी गति से होते हैं। अच्छे रास्ते पर चलते है। बुद्धि बढ़ाकर और अच्छे कर्म करके जीवन में सुख-शांति प्राप्त की जा सकती है। गीता में कहा गया है कि सत्त्वगुण में प्रवेश कर चुके लोगों का आचरण कैसा होता है।

श्लोः **सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते ।**
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ।। (भा.गि.14-11)

भावः- सत्त्वगुण विकसित होने पर मनुष्य के सभी कार्य सात्विक, ज्ञानयुक्त एवं ज्ञानमय होंगे। अंत में सत्वगुण प्रवेश करने वालों का व्यवहार पूरी तरह से बदल जाता है। बुद्धि बढ़ती है। विवेकपूर्ण ज्ञान उत्पन्न होता है। वे अच्छे काम करते हैं। सांसारिक लोग ऐसा करते हैं। उस प्रकार के सत्व के साथ किए गए सभी कार्यों से न केवल स्वयं को, बल्कि विश्व को भी लाभ होगा। इसलिए व्यक्ति को शीर्घ ही सत्त्वगुण में परिवर्तित हो जाना चाहिए। यह मंदिर परंपरा उसी के लिए है। इसके अलावा, भगवान कृष्ण ने निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से बताया है कि किस प्रकार के कर्म किस प्रकार के परिणाम देते हैं।

श्लोः **कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम ।**

रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम ।। (भा.गि.14-16)

भावः- कहा जाता है कि शुद्ध सुख सात्विक कर्मों का फल है, दुख रजोगुण कर्मों का फल है और अज्ञान तमोगुण कर्मों का फल है। उपरोक्त श्लोक के अनुसार हम यह जान सकते हैं कि तमोगुण और रजोगुण हानिकारक हैं और सात्विक गुण सभी के लिए लाभकारी है। भगवान श्रीकृष्ण कहते है कि यदि कोई व्यक्ति किसी भी गुण के साथ मरेंगे तो उन्हें कैसा भविष्य मिलेगा।

श्लोः **यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत ।**

तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ।। (भा.गि.14-14)

भावः-जब भी किसी मनुष्य में सत्त्वगुण विकसित होता है और उसकी मृत्यु हो जाती है, तब वह सर्वोत्तम ज्ञान रखने वालों के पवित्र लोकों को प्राप्त करता है।

श्लोः **रजसि, प्रलयम्, गत्वा, कर्मसंगिषु, जायते,**

तथा, प्रलीनः, तमसि, मूढयोनिषु जायते ।। (भा.गि.14-15)

भावम :- रजोगुण विकसित होते समय मरने वाला व्यक्ति कर्मशक्तियों की योनि में जन्म लेता है। इसी प्रकार, जो तमोगुण विकसित करके मरता है, वह मूर्खों की योनि में जन्म लेता है। भगवान ने कहा है कि तमोगुण, रजोगुण, भविष्य के जन्मों के लिए हानिकारक है। उसके अनुसार सत्त्वगुण में प्रवेश करना चाहिये। इन पर काबू पाना चाहिए और मंदिर की परंपराओं को जानना चाहिए।

एक बार और पता करें। इन स्नानों, पर्वतारोहण, प्राधिक्षण, साष्टांग प्रणाम, शठगोप, पूजा और स्तोत्र से जो पुण्य मिलता है। हमारी परेशानियाँ हल नहीं हो सकतीं। हमारी इच्छाएँ पूरी नहीं हो सकतीं। हमारे पाप दूर नहीं हो सकते। लेकिन ये सभी मनुष्य के गुणों को बदलने के लिए हैं। मनुष्य को अच्छे

मार्ग पर लाना। इनसे जो मुनाफ़ा होता है यह वही है. इसके अलावा, एक और कारण है कि इस मंदिर की परंपरा प्राचीन बुजुर्गों के द्वारा शुरू की गयी थी। इसका कारण यह है कि पहले के समय में पढ़ाई के लिए इतनी सुविधाएं नहीं थीं जितनी आज हैं। स्कूलों और कॉलेजों में किताबें, पेन, कैलकुलेटर और कंप्यूटर जैसी आधुनिक सुविधाएं भी नहीं थीं। उन दिनों गुरुओं की शिक्षा होती थी। यदि किसी को विद्या सीखनी हो तो गुरुकुल जाकर वहां के गुरु से अध्ययन करना पड़ता था। वह शिक्षा भी ऐसी थी कि गुरु मुँह से बोलता था तो शिष्य सुनकर मनन करता था। इस प्रकार सारी शिक्षा मस्तिष्क में संग्रहित रहती थी। उन दिनों में दिमाग ही किताबें हुआ करते थे।

शिष्य इसी प्रकार सीखी गई शिक्षा को अगली पीढ़ी तक पहुँचाते थे। यही थी उन दिनों की शिक्षा व्यवस्था. इसका मतलब है कि वे ध्यान का अभ्यास करके सत्य को जान सकते थे। उन्हें तथा उस समय के ऋषि-मुनियोंथे एवं गुरुओं को भी तपस्या द्वारा ज्ञात हुआ कि आत्मा अर्थात आत्मा ही ईश्वर है। ईश्वर सभी प्राणियों में है । वे शिष्यों को यह सत्य तो सिखाते थे परन्तु वे इस सत्य को भूल जाते थे कि आत्मा ही ईश्वर है। यदि कुछ मौखिक शिक्षण के कारण, यह वर्षों या पीढ़ियों बाद तक मनुष्यों तक ही सीमित रहा होगा जब उन्होंने यह सत्य सीखा। आत्मा ही ईश्वर है। यह सत्य सामान्य लोगों को ज्ञात नहीं होगा।

वे भगवान के बारे में नहीं जानते। इसलिए, अतीत के ऋषियों और गुरुओं ने सोचा कि आत्मा ही ईश्वर है ताकि हर कोई इस मंदिर की परंपरा जान सके। हम समझ सकते हैं कि यह मंदिर परंपरा सभी पीढ़ियों को भुलाना ही जाए। मंदिर जीवित भगवान है मंदिर की तुलना शरीर से की जा सकती है। कारण यह है कि जिस स्थान पर भगवान निवास करते हैं उसे मंदिर कहते हैं। और चूँकि ईश्वर एक आत्मा है, इसलिए आत्मा शरीर में निवास करती है।

इसलिए। शरीर मंदिर बन जाता है. इसीलिए शंकराचार्य ने कहा, मंदिर के समान है, जीव देव का प्रतिरूप है। सशरीर में भगवान की छवि ही मंदिर मे मूर्ती है। उस समय के विज्ञानो ने इस प्रकार की मंदिर संरचना को दुनिया को हमेशा के लिए ज्ञात कर दिया है। इस मंदिर परंपरा का ताप्तर्य यह है कि भगवान शरीर मे मौजूद है।

मानव जीवन का उद्देश्य खाना, पीना या सोना नहीं है। मानव जीवन का लक्ष्य ईश्वर को जानना और ईश्वर तक पहुंचना है। जो लोग इस लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे उन्हें दुखों और कठिनाइयों से हमेशा के लिए मुक्ति मिल जाएगी। उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विद्वानों ने मंदिर परंपरा को दुनिया के सामने प्रस्तुत किया। लेकिन मनुष्य बाहरी अर्थ तो ले रहा है लेकिन भीतर का अर्थ नहीं जान रहा है। देखिए वे मंदिर क्यों जाते हैं? वे मूर्ति के दर्शन के इरादे से जाते हैं। जो लोग मंदिर में जाते हैं वे सबसे पहले अपनी चप्पलें बाहर ही उतारते हैं। फिर मंदिर के चारों ओर तीन बार प्रदिक्षण किया जाता है। फिर पुजारी के पास पहुंचा जाता है। वहां वे उसे कपूर और नारियल देते हैं। यह देते ही पुजारी नारियल फोड़ता है और आरती करता है। वह आरती करते हुए मूर्ति को प्रणाम करता है। फिर पुजारी नारियल की निवेदन करता है और उसका आधा हिस्सा वापस कर देता है। इसे प्रसाद कहा जाता है। इसे खाकर और इसकी मिठास का लुत्फ उठाते हैं। वे कुछ देर वहीं बैठते हैं और घर चले जाते हैं। कोई भी व्यक्ति मंदिर जाते समय यही करता है। लेकिन ये सब करने का कोई मतलब होता है। यह सब अर्थ सहित प्रस्तुत किया गया।

इसी प्रकार, जीवन में जो कोई सच्चे ईश्वर को नहीं देख पाता, जो ईश्वर तक नहीं पहुँच पाता तो उसकी कठिनाइयाँ समाप्त नहीं होंगी और उसे मुक्ति नहीं मिलेगी। मूर्ति दर्शन वैसा ही है जैसे यदि किसी को जीवन में सच्चे भगवान के दर्शन होने चाहिए। और सच्चे ईश्वर को देखने के लिए धूल भरी

चप्पलों को बाहर छोड़ने की तरह ही... हमें अपने अंदर के अवगुण, काम, क्रोध, लोभ, मद, धर्म और लोभ को छोड़ना होगा। फिर तीन प्रदिक्षण करने का अर्थ है अपने अंदर के तीन गुणों पर विजय पाना। साथ ही मंदिर में मूर्ति के दर्शन के लिए सबसे पहले पुजारी के पास जाना चाहिए। इसके अलावा, यदि आप अपने भीतर के परमात्मा, यानी आत्मा की शरण लेना चाहते हैं, तो आपको विशेष रूप से एक ऐसे गुरु की तलाश करनी चाहिए जो आपको परमात्मा के दर्शन करा सके।

जब वह पुजारी के पास जाता है तो उसे केवल एक एकाक्षी वाला नारियल दिया जाता है। इसका मतलब है आडू की तरह हम से चिपकी, हमारे इच्छाओं से मुक्त करना। तब पुजारी नारियल को फोडता है। इसका मतलब यह है कि जब हम भगवान को देखने के लिए गुरु की ओर मुडते हैं, तो सबसे पहले गुरु हमारे भीतर गहरे तक जड़ जमाए अहंकार को चूर-चूर कर देते हैं। यानि हटा देता है। यह है कठोर नारियल फोड़ने का अर्थ। इसके बाद पुजारी हरती जलाकर उसे मूर्ति के चारों ओर तीन बार घुमाता है। जैसे ही आरती की रोशनी में मूर्ति दिखाई देती है, हम दोनों हाथों से, जो तब तक अलग-अलग थे, एक-दूसरे को प्रणाम करते हैं। पहले के मंदिरों यानी आगम शास्त्र के अनुसार बने मंदिरों में गर्भगृह अंधकारमय होता है। किसी कोने में अखण्ड दीपक जलाया जाता है। उस छोटी सी रोशनी में मूर्ति स्पष्ट दिखाई नहीं देती। इसलिए, जब आरती दी जाती है, तो आरती की रोशनी में मूर्ति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। और अलग-अलग हाथ अनजाने में हमारे करीब आ जाते हैं। अलग - अलग हाथों को एक साथ लाकर प्रार्थना करने की भी यही आशय है।

जब भी गुरु हमारा अभिमान दूर करते हैं, तब हमारा अज्ञानता का अंधकार दूर हो जाता है। ज्ञान का प्रकाश चमकता है. उस ज्ञान के प्रकाश में ही सच्चे ईश्वर अर्थात आत्मा की प्राप्ति होती है। जब आत्मा का इस प्रकार बोध हो जायेगा तो जिनको अब तक यह अनुभूति हो रही थी कि ईश्वर और मैं अलग-अलग हैं, उन्हें यह अनुभव हो जायेगा कि ईश्वर और मैं अलग-अलग नहीं हैं, बल्कि दोनों एक ही हैं। यह सत्य सिखाया जाता है कि मै ईश्वर हूँ। 'अहं ब्र्ह्मास्मि' सत्य की शिक्षा दी जाती है। अलग-अलग हाथों को एक साथ लाकर झुकने का मतलब भी यही है। तो पता करो. मंदिर में मूर्ति के दर्शन करने की बात कहने का तात्पर्य यह है कि आप अपने भीतर मौजूद परमात्मा के दर्शन करना सीखें।

सभी योगी कहते हैं कि ध्यान है
वे जो कुछ भी करते हैं वह ध्यान है।
ध्यान का अर्थ है सांस पर ध्यान।

प्रसाद

फिर वे हमें जितना हमने दिया है उसका आधा देते हैं, चाहे वह केले के दातुन, नारियल और अन्य चीज़ों । इसका मतलब है कि हम उन्हें जो भी देते हैं वे वही देते हैं। हम इसे प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं। हम इसे पवित्र मानते हैं। इसका भी अर्थ है। इसका मतलब यह है कि हम भगवान को जो देते हैं वही हमें मिलता है। मतलब प्रसाद के बदले में। याद रखें कि इस सृष्टि में आप जो दोगे, जितना दोगे, जैसा दोगे, वैसा ही कुछ पाओगे। प्रसाद लौटाने का अर्थ यही है। इसलिए केले का दातून दो तो केले का दातुन और नारियल दो तो नारियल। और हम जो भी देते हैं वह हमें प्रसाद के रूप में मिलता है। इसका मतलब है कि अच्छा करेंगे तो अच्छा, बुरा करो तो-बुरा, हिंसा करो तो-हिंसा, सेवा करो तो-सेवा, आदर करो तो-आदर, अपमान करो तो-शर्म, हानि पहुंचाओ तो-नुकसान, कष्ट पहुंचाओ तो-कठिनाई। इस का अर्थ है जो दिया गया है उसे वापस पाना । यदि आप इसे नहीं समझते हैं और अनुष्ठान का पालन करते हुए इसे मंदिर में देते हैं, तो आपने जो दिया है उसका आधा हिस्सा आपको मिलेगा। लेकिन यदि आप इसका अर्थ जानते हैं और इसे दुनिया को देते हैं, तो आपको पता होना चाहिए कि यह कई गुना बढ़ जाएगा।

हमें इस बात को समझना चाहिए और इस सृष्टि से हम जो अपेक्षा करते हैं उसे देने का प्रयास करना चाहिए। वह मत दो जो तुम नहीं चाहते। परन्तु चूँकि वे इसे नहीं समझते, इसलिए वे सृष्टि के सिद्धांत के विपरीत कार्य कर रहे हैं। क्योंकि वे सभी प्राणियों पर अत्याचार कर रहे हैं। लेकिन सुख

चाहते हैं। इसका मतलब यह है कि जो दिया जाता है वह एक चीज़ है, जो चाहता है वह दूसरी चीज़ है। और जो चाहा जाता है वह कैसे मिलता है? जो कुछ भी दिया जाता है वह इस सृष्टि से आता है। इसलिए हिंसा न करें. जितना संभव हो सके सभी को और हर चीज को खुश करने का प्रयास करें। आप सदैव सुखी रहें। प्रसाद लौटाने का यही अर्थ है। इसके अलावा हम दिए गए प्रसाद को पवित्र मानकर अपनी आंखों से ग्रहण कर लेते हैं। इसका अर्थ है कि जीवन में जो कुछ भी हमें दिया गया है उसे ईश्वर का उपहार मानना चाहिए। चाहे वह कठिन हो, आरामदायक हो, लाभ हो, हानि हो या सम्मान हो, इसका एहसास होना चाहिए। सहर्ष स्वीकार करें. हमें वह प्राप्त करना चाहिए जो हमें उपहार के रूप में दिया गया है - चाहे वह शर्म, दर्द, बीमारी या खुशी हो।

हर चीज़ में समानता दिखानी चाहिए. आनंद मिले तो अभिभूत मत होना। कठिनाइयाँ आने पर निराश न हों, याद रखें कि जो पुजारी ने दिया है, वही पुजारी का प्रसाद है। पुजारी ने जो दिया उसे सभी खुली आँखों से स्वीकार कर रहे है। और पवित्र माना जाता रहा है। परन्तु परमेश्वर ने हमें जो कुछ पवित्र के रूप में दिया है वही परमेश्वर का प्रसाद है। लेकिन भगवान ने जो दिया है उसे पवित्र नही माना जाता। याद रखें कि हमारे पास जो कुछ भी है और जो कुछ भी हमें मिलता है वह सब ईश्वर की रचना से है, न कि वह जो हमें आने पर मिला था। अतः हमारे जीवन में जो कुछ भी दिया गया है, उसे ईश्वर का दिया हुआ उपहार समझना चाहिए। यही प्रसाद को आंखों पर छने का निहितार्थ। और जो प्रसाद हम खाते हैं, इसके कारण हम जो चाहते हैं वह नहीं मिलता और हमारी परेशानियां दूर नहीं होतीं। इसलिए आपको इसका अर्थ जानना चाहिए और उसके अनुसार कार्य करना चाहिए। प्रसाद के बारे में कुछ बातें हमें जानने की जरूरत है।

मंदिरों में जो कुछ भी निवेदन किया जाता है वह सात्विक सामग्री है। यानी पुलिहोरा के अलावा दद्दोजनम, चक्रपोंगली, पायसम, लड्डू, अट्टू, वड़ा पप्पू और चालिमिडी भी बताए गए हैं। अधिक दातून और फल देने की प्रथा अधिक दिखाई देती है। इसका कारण यह है कि फल अन्य सभी चीज़ों से श्रेष्ठ है। फल सात्विक गुणवत्ता बढ़ाते हैं। इसके अलावा, मंदिरों में ऐसी बातों की सूचना देने का तात्पर्य यह है कि सभी को सात्विक गुणी बनना चाहिए और सभी सात्विक भोजन करना चाहिए।

प्रसाद तक सात्विकता का पालन सदाचार की भावना से किया जाता है, लेकिन मंदिरों में ऐसी सात्विक सामग्री और फलों की सूचना क्यों दी जाती है? ऐसा इसलिए है क्योंकि मंदिर परंपरा के बुजुर्ग ऐसी बातें क्यों बताई जाती हैं, यह न समझ पाने और इसका अर्थ नहीं समझ पाने के कारण दैनिक भोजन में इस नियम का पालन नहीं किया जाता है। उन्हें जो खाना पसंद है वो ले रहे हैं। स्वाद को महत्व दे रहे हैं? वे स्वाद को महत्व देकर मांसाहार यानी चिकन, मटन, मछली और अंडे जैसे मांस खाते हैं। इसे कई स्वादों में बनाया जाता है और खूब खाया जाता है। वे वैसा ही खाना चाहते हैं। और जीवन के बारे मे नही सोचते है। लेकिन वे यह नहीं जानते कि मांस और अंडे सभी प्रजनन क्षमता बढ़ाते हैं। रजोगुण में क्रोध होता है, बुद्धि नष्ट हो जाती है, कोई विचार नहीं रहता और इस प्रकार वे ऐसे कार्य करते हैं जो नहीं करने चाहिए। वे सृष्टि और सृष्टि के गुणों के विपरीत कार्य करके दूसरों को हानि पहुँचाते हैं। उन्हें नहीं पता कि ऐसा करने से उन्हें भविष्य में नुकसान भी होगा। गलतियां करते है। उनका कहना है कि उन्होंने ऐसा व्यवहार क्यों किया करते है?

कुछ मामलों में ऐसा बोलना जरूरी पडता है। यदि आप ऐसा व्यवहार नहीं करते हैं, तो आप ऐसा नहीं कर सकते, लेकिन उन्हें यह एहसास नहीं हो पाता कि उनका व्यवहार उनकी गुणवत्ता के कारण है। जो लोग मंदिर परंपरा

का पालन करते है उन्हें शाकाहारी भोजन करना चाहिए। अधिक फल खायें। यह उनके लिए सबसे अच्छा है। इसीलिए मंदिरों में मांस, मछली और फल का सेवन नहीं किया जाता है। चूँकि ऐसा भोजन शाकाहारी मानव शरीर के लिए वर्जित है। इसलिए, प्रसादम के महत्व और अर्थ को जानकर, वास्तविक जीवन में कौन साधारण शाकाहारी भोजन लेगा! उनकी जिंदगी पूरी तरह बदल जाएगी. कारण यह है कि उनके गुण बदल जाते हैं। प्रसादम का यही अर्थ है. इसके अलावा, हमने यह भी सीखा कि मंदिर शरीर का प्रतिरूप है।

यानी अगर मंदिर सात्विक शाकाहारी भोजन का उपदेश दे रहा है तो इसका मतलब है कि हमारे शरीर को भी सात्विक शाकाहारी भोजन खाना चाहिए। कारण यह है कि शरीर ही सच्चा मंदिर है क्योंकि शरीर में ही ईश्वर का वास है। इसीलिए शंकराचार्य ने कहा 'देहो देवालयो प्रोक्तः! जीवोदेवो सनातनः । इसका अर्थ है "शरीर ही मंदिर है।" इसमें जो निवास है वह ईश्वर है, उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा। इसलिए, मंदिरों में सात्विक सामग्री की निवेदन करने का अर्थ यह जानना है कि सच्चे मंदिर में किस प्रकार का भोजन परोसा जाना चाहिए। लेकिन इंसान इस बात को नहीं समझते और मरे हुए जानवरों का मांस उस मंदिर में रख देते हैं जहां भगवान रहते हैं। अब और नहीं सोचता है। क्योंकि मृत जानवर को 'शव' कहा जाता है। अगर ऐसी कब्र उस मंदिर में रखी जाए जहां भगवान मौजूद हैं, तो सोचिए कि यह कितना अपवित्र होगा, कितना अपमानजनक होगा। वजह ये है कि कब्रिस्तान में ही लाशों को दफनाया जाता है. इसके अलावा, इसे मंदिर की तरह शरीर में नहीं रखा जाता है। देखिये, अगर किसी ने गलती से भी किसी मंदिर में कब्र रख दी तो उस मंदिर में जाकर उसका शुद्धिकरण किया जायेगा, जैसे कि कोई दुष्कर्म हुआ हो।

इसके बारे में सोचो। जो लोग यह मानते और सोचते हैं कि जिस मंदिर में भगवान की हर तरह की मूर्ति स्थापित है, उसका कैसे अपवित्र करना ? उस

शरीर को कैसे अपवित्र करता है जिसमें भगवान वास्तव में रहते हैं? लाशों का निपटान कैसे किया जाता है? मुर्दे का मांस कैसे खाएं? इसके बारे में सोचो। इसलिए, मंदिर परंपरा में हर चीज का कोई न कोई मतलब है। इसलिए विद्वानों और बुजुर्गों द्वारा बताए गए मंदिर परंपराओं के अर्थों को सीखना चाहिए और उन्हें आचरण में लाना चाहिए। और यह एक अनुष्ठान के रूप में पालन करने वाली चीज़ नहीं है। जान लें कि इसे फॉलो करने से कोई फायदा नहीं होगा। लेकिन यदि आप अर्थ जानते हैं और अभ्यास करते हैं तो सब कुछ फायदेमंद है। सब कुछ 'पुण्य' है।

जो जान ले लेता है वह राक्षस है। यदि आप किसी की जान नहीं लेते, तो आप इंसान हैं। बिना प्राण गँवाये देखोगे तो महात्मा हो। यदि तुम जीवन दे दो, तब परमात्मा।

जान ले तो। यदि आप जीवित प्राणी नहीं खाते हैं, तो आप मानव हैं।
बिना प्राण गंवाए रहते हैं तो आप महात्मा हैं।
यदि आप इसके लिए अपना जीवन देते हैं, तो आप सर्वोच्च हैं।

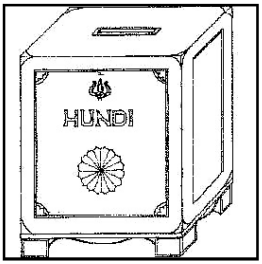

हुंडी में उपहार

हुंडी में उपहार देने की भी प्रथा है। बहुत से लोग सोचते हैं कि वे हुंडी में जो भी उपहार डालते हैं वे भगवान को दिए जाते हैं। भगवान उससे प्रसन्न होंगे. बदले में उसे न केवल धन-दौलत मिलती है। मनोकामनाएँ भी पूर्ण होगी। उनकी परेशानियां दूर हो जाएंगी. लेकिन हुंडी में उपहार चढ़ाने का भी एक अर्थ होता है। ईश्वर को देने का अर्थ है संसार को देना। यही कारण है कि जो लोग मंदिर जाते हैं उन्हें उपहार देने का रिवाज है। क्योंकि हमें यह ईश्वर की दुनिया से मिला है, हमें इसमें से कुछ हिस्सा दुनिया को देना चाहिए।

और यदि तुम संसार को देते हो, तो वह परमेश्वर को कैसे दिया जा सकता है? याद रखें इस संसार में ऐसा कुछ भी नहीं है जो ईश्वर का नहीं है। इसलिए इस संसार को जो कुछ भी दिया जाता है वह ईश्वर को दिया जाता है। इसका मतलब यह है कि हम विश्व कल्याण के लिए जो कुछ भी देते हैं वह भगवान को अर्पण करने के समान है। पता लगाना। पैसा देना देना नहीं है। कुछ भी दिया जा सकता है। चाहे समय हो, चाहे ऊर्जा हो, चाहे ज्ञान हो, चाहे बुद्धि हो, चाहे वाणी हो, जो कुछ भी आपके पास है, उसे संसार को दे देना चाहिए। अर्थात भगवान को दे देना चाहिए। ये बात शिरडी बाबा ने भी कही थी। 'किसी को भी कुछ भी मिलता है क्योंकि सब कुछ परब्रम्ह का है। भले ही! यह जानना चाहिए कि यह परमेश्वर की ओर से है।'

इसके अलावा, 'हमें भगवान से प्राप्त धन का आनंद यज्ञीय तरीके से लेना चाहिए। हमें इसे वितरित करना चाहिए। हमें किसी भी प्रकार का लालच और वासना नहीं रखनी चाहिए'! उन्होंने यह कहते हुए ईशावास्य उपनिषद का एक श्लोक भी उद्धृत किया। यानी जानिए उपहार देने का मतलब. दुनिया को बांटने और देने के लिए, विद्वानों ने कहा कि उपहार इसी बात को बताने के लिए पेश किए गए थे। यही निहितार्थ है.

केश खंडन

इसके अलावा कुछ मंदिरों में सिर का बाल चढ़ाया जाता है। इसका भी एक अर्थ है. पत्रीजी कहा करते हैं. 'सिर का बाल नहीं हटानी चाहिए' - सिर से विचारों को हटा देनी चाहिए। इसका अर्थ है कि मन को विचारों से मुक्त कर देना चाहिए । इसे ध्यान की अवस्था कहा जाता है। यही ऋषि पतंजलि ने कहा था, 'चित्त वृत्ति निरोधम'। उन्होंने कहा, 'योगः चित्तवृत्ति निरोधः'। उन्होनें यह भी कहा कि यही योग है।

भगवान कृष्ण ने भी अर्जुन को योगी बनने के लिए कहा था। कहते हैं योगी सबसे महान हैं।

श्लो : तपस्विभ्योधिको योगी ज्ञानीभ्योपि मतोधिकाः
कर्मिभ्यश्चादिको योगी तस्मायोगी भवार्जुन (भागी.6-46)

ताः-हे अर्जुन! योगी तपस्या करने वालों से श्रेष्ठ है, विज्ञान का ज्ञान रखने वालों से श्रेष्ठ है, अग्निहोत्र अनुष्ठान करने वालों से श्रेष्ठ है। तो आप योगी बनिए।

यह सबसे महान अवस्था है जिसे मनुष्य प्राप्त कर सकता है। जो लोग ऐसा करेंगे उन्हें धीरे-धीरे देवत्व की प्राप्ति होगी। शास्त्र लिखने वाले विद्वानों के अनुसार, केश खंडन का अर्थ है मन से विचारों को दूर करना, जिसका अर्थ है बुराई को दूर करना। इसमें 'श्वास ध्यान' का ध्यान करना चाहिए। यही ध्यान का निहितार्थ है।

'दो लोग एक ही कुर्सी पर नहीं बैठ सकते। यदि एक नहीं उठ जाता है तो दूसरे को कोई मौका नहीं मिलता। इसके अलावा, यदि आप ईश्वर पर ध्यान केंद्रित करना चाहते हैं, तो संसार और सांसारिक सुखों पर ध्यान केंद्रित नहीं करें'।

अखंड दीपम मंदिर की घंटी

प्रत्येक शरीर में एक ज्योति है जिसे आत्मा कहते हैं। यदि शरीर में आत्मा न हो तो शरीर मर जायेगा। इसलिए शरीर में सदैव आत्मा का प्रकाश रहना चाहिए। यही कारण है कि मंदिर में अखंड दीपक नहीं भुजना चाहिए जो शरीर की प्रतिकृति है। कहने का यही अर्थ है कि मंदिर में अखंड दीपक जलाना चाहिए, जो शरीर का प्रतिरूप है, जैसे आत्मा की लौ शरीर में चमकती है। इसलिये अखण्ड दीपम्।

साथ ही मंदिर में घंटियाँ बजती रहनी चाहिए, जिसका अर्थ है कि हर किसी के शरीर में 'ओंकार' की ध्वनि हमेशा बनी रहती है। उसी के संकेत के रूप में हर मंदिर में घंटी बजती रहती है। किसी भी धर्म के मंदिरों में घंटियाँ बजाई जाती हैं। ऊंचे गोपुरम बनाना और रात में आकाश दीप को रखने का अर्थ है, उस समय सड़कें अच्छी स्थिति में नहीं थीं। राहगीर दूर से ही बता सकते थे कि दिन में गुंबनों के सहारे और रात में आकाशदीप की रोशनी के सहारे पास में कोई गाँव था। वे उस गांव तक पहुंच सके। मंदिर परिसर में विश्राम भी करते थे। मंदिर परंपरा और मंदिर निर्माण में बहुत सारे अर्थ हैं। सभी मनुष्य के लिए लाभकारी हैं।

और भगवान के प्रति एक मूर्ति।शरीर के लिए एक मंदिर! इसके अलावा, शरीर में पंचभूतों के जवाब में, मंदिर में प्रसाद भू तत्व होता है। उदक जल का सिद्धांत है। दीपक अग्नि है और धूप वायु है। मंदिर में घंटा नाद माने आकाश तत्व भी पाए जाते हैं। इसके अलावा, मंदिरों के मंडप मनोरंजन और

वैज्ञानिक गतिविधियों के लिए बहुत उपयोगी होते हैं। वहाँ गुरु और पंडित अपने भक्ति संदेशों के साथ नाटक और पुराणकथाएँ करते थे। वे ऐसे ही व्याख्यान देते थे। नर्तक नृत्य करके मनोरंजन करते थे। कलाकारों के लिए मंदिर बहुत उपयोगी होते हैं।

किसी भी तरह से, शस्त्र विज्ञान अर्थ से भरपूर है, लेकिन अर्थहीन नहीं। लेकिन हम इसका मूल अर्थ न समझकर इसे एक प्रथा के रूप में अपनाते हैं। हम फायदे के बारे में सोचे बिना तरह-तरह की इच्छाएं मांगते हैं। कोई जैसा चाहता है वैसा ही करता है। चूँकि जो अभ्यास किया जाता है वह एक ऐसी चीज़ है जिसकी अपेक्षा की जाती है, वह दूसरी चीज है। किसी को वह कैसे मिलता है जिसकी अपेक्षा की जाती है? आप जो चाहते हैं वह आपको कैसे मिलेगा? जब ऐसा नहीं हुआ, तो वह उदास हो गया और अंततः भगवान पर से उसका विश्वास मिठ गया। इसीलिए हम बदलते भगवान, बदलते फोटो, बदलते धर्म देखते हैं। इसलिए, हम जो करते है यह 'पुण्य' नहीं है. आपको पता होना चाहिए कि उस काम को करने से किस प्रकार का पुण्य मिलेगा। इसलिए, आप जो कर रहे हैं उसका परिणाम आपको पता होना चाहिए। अगर आप ऐसा काम जानते हैं और करते हैं तो आपको अपेक्षित लाभ जरूर मिलेगा। याद रखें कि सभी मंदिरों की परंपरा आपके भीतर मौजूद परमात्मा यानी आत्मा की शरण लेने यानी ध्यान करने के बारे में है।

इसीलिए वे मूर्ति के दर्शन के बाद कुछ देर बैठते हैं और उठ जाते हैं, यानी पहले के समय में कोई वहां बैठकर कुछ देर ध्यान करते थे। अर्थात मंदिरों का उपयोग ध्यान कक्ष के रूप में किया जाता था। जब वे मंदिर में मूर्ति देखते हैं, तो उन्हें अपने भीतर के परमात्मा की याद आती है। वे कुछ देर वहीं बैठ कर ध्यान द्वारा उस देवता पर ध्यान केन्द्रित करते थे। बैठने और उठने का रिवाज हो गया है. सभी लोग ध्यान का अर्थ भूल गये हैं। लेकिन अंततः बैठने का अर्थ

ध्यान करना ही है।

पहले कई लोगों के लिए उनके घर ध्यान के लिए उपयुक्त नहीं थे। इसलिए वे मंदिर जाकर ध्यान करते थे। न केवल पहले, बल्कि अब भी कई लोग अपने घरों को ध्यान के लिए उपयुक्त नहीं पाते हैं। इसलिए आइए हम मंदिरों को भी ध्यान कक्ष के रूप में उपयोग करें। आइए हम अपने भीतर मौजूद परमात्मा का ध्यान करें। आइए ध्यान करें. जानिए भगवान को जानने के लिए ध्यान करने के लिए मंदिरों का अर्थ। तो आइए मंदिरों को ध्यान कक्ष में बदल दें। आइए जीवन को धन्य करे। आइए ध्यान करें और भगवान तक पहुंचें।

जो लोग परमेश्वर का अनुसरण नहीं करते वे नीच हैं। जो भगवान को देखना चाहते हैं वे मध्यम हैं। जो लोग सदैव ईश्वर प्राप्ति के लिए ध्यान करते हैं वे सर्वश्रेष्ठ हैं।

मंत्र पुष्प अर्थ

पूजा पूरी होने के बाद मंत्र पुष्प का जाप किया जाता है। फिर वे अपनी इच्छाएँ पूछते हैं और गोत्रनाम का पाठ करते हैं। मन्त्रपुष्पम का अर्थ भी नहीं जानते। लेकिन यदि आप मन्त्र पुष्प का अर्थ जानते हैं तो ईश्वर कौन है? वह कितना महान है? उसकी उपासना किस तरह की जाए? यह स्पष्ट हो जाता है।

मंत्रपुष्पम दर्शाता है कि वह सबमें आत्मा है, वह अविनाशी है, वह सर्वव्यापी है, वह हर चीज का आधार है, वह ब्र्मा है, वह हरि है, वह शिव है, वह इंद्र है। मन्त्रपुष्पम् का यही अर्थ है ईश्वर का ध्यान करना। इसके अलावा, मंत्र पढ़ना और उस फूल को वहां रखना जरूरी नहीं है। श्च्छाएँ मांगने के लिए नहीं ।

अक्षर परब्र्म, उस ईश्वर यानि नारायण यानि आत्मा का ध्यान करना चाहिए। अर्थात अन्तराल में आत्मा पर ध्यान केन्द्रित करना। वह है अन्तर्मुखी बनना। यह 'श्वास पर ध्यान' होना चाहिए। यानि आपको 'मेडिटेशन' करना आना चाहिए। ध्यान करना चाहिए और जीवन को धन्य बनाना चाहिए। मोक्ष प्राप्ति के लिए. तो जान लीजिए, मंत्रपुष्पम का मतलब 'मंत्र पढ़ना और फूल चढ़ाना' नहीं है। मंत्र का अर्थ जानना और उसका आचरण करना।

आइये जानते हैं मंत्रपुष्पम का अर्थः-

1. **ॐ सहस्र श्रीं देवं विश्वक्षं विश्वशम्भुवम ।**

   उसके कई सिर हैं. उसकी कई आंखें हैं। वह जो ब्र्मांड में खुशी लाता है।

2. **विश्वम नारायणम देव मक्षरम परम पदम ।**

   नारायण जो ब्र्मांड में व्याप्त हैं। अविनाशी. वह सर्वोच्च पद पर हैं।

3. **विश्वतः परमनित्यं विश्वं नारायणागम हारिम ।**

   सार्वभौमिक, महान, शाश्वत. इन्हें नारायण और हरि कहा जाता है ।

4. **विश्वमे वेद पुरुषो द्विस्व मुपाजिपति ।**

   यह समस्त दृश्य जगत उस पुरुष का ही स्वरूप है। इसी से संसार जीवित है।

5. **पथिम विश्वस्यात्मे स्वरागं संवतगं शिव मच्युतम ।**

   वह जो ब्र्मांड का शासक है, स्वयं का प्राधिकारी है। वह जो शाश्वत, शुभ, अविनाशी है, जो समस्त मानव जाति में विद्यमान है।

6. **नारायणं महाज्ञेयम विश्वात्मानं परायणम।**

   महान, सर्वज्ञ. वह सर्वव्यापी आत्मा है। वह सर्वोत्तम है.

7. **नारायण परोज्योति रत्मा नारायण पाराः**

   वह नारायण आत्माओं के भीतर की आत्मा है, सर्वोच्च आत्मा है।

8. **नारायण परमब्र्म तत्वम नारायण पराः।**

   वह नारायण ही परब्र्म है, नारायण ही परतत्व है।

9. **नारायण परोध्यता ध्यान नारायण परः ।**

   जो ध्यान करता है, जिसका ध्यान किया जाता है, वही परम नारायण है, वही परमात्मा है, वही परतत्व है।

10. **यच्च कि इच्छा जगगत्सर्व दृश्यते श्रुयतेपिवा।**

    जिस संसार को हम देखते और सुनते हैं वह सर्वव्यापी है। इतना ही नहीं,

बल्कि जो हम देख और सुन नहीं सकते, वह पूरी दुनिया में फैला हुआ है।

11. अस्तर्बहिश्च तत्सर्व व्याप्त नारायण स्थितः।

भीतर और बाहर सबमें व्याप्त नारायण ही आत्मा है ।

12. अनंत मव्ययं कविग्म समुद्रेस्तं विश्वशम्भुवम ।

वह जिसका अंत नहीं है, जो अविनाशी है, जो सब कुछ जानता है, जो समुद्र के समान व्यापक है (समुद्र ही आकाश है। जहां आकाश का अंत है, उसका कोई अंत नहीं है। आकाश का कोई अंत नहीं है। इसीलिए भगवान) अनंत कहा जाता है) वह जो दुनिया में खुशी लाता है।

इस प्रकार, परमार्थ जीवन के सार और उसके निवास स्थान का वर्णन नीचे करता है।

13. पद्मकोश प्रतिकासग ह्मदय चाप्यधो मुख ।

कमल कली के समान मुख नीचा और चिपका हुआ।

14. अधो निश्चय वितस्त्यने नाभ्यमुपरि तिष्ठति ।

(एक वस्तु) पेट से बारह हाथ ऊपर है।

15. ज्वाला मलाकुलं भाति विश्वसया तनं महत ।

यह अग्नि से पूर्ण स्थान और संपूर्ण जगत का आधार है।

16. संततगं शिराबिस्तुलम्बा त्यकोसासन्निभम।

हमेशा रक्त वाहिकाओं को छूती रहती है। यह एक कली की तरह है. (अर्थात यह भाव कि कुछ अंत दिख रहा है)

17. तस्यन्ते सुशिरागं सुखं तस्मिन त्सर्व पतिष्ठितम।

कली के अंत में एक छोटा सा छेद होता है। उस अंत में यह किया जा सकता है.

18. तस्य मधे महा नागनी रविश्वरसि रविस्वतो मुखः।

सोगरा भुग्वि भजन तिष्ठन्नहारा माजरः कविः।।

इसके अंदर एक महान यज्ञ है. जिधर भी देखो, आग ही आग है. आग हर

तरफ फैल जाएगी. वह यज्ञ सबसे पहले भोजन करता है (खाए हुए भोजन को सभी के साथ बाँट लेता है)

19. तिर्यगुर्ध्वा मधस्शयिरसा यस्तस्य सन्तता।।

संता पयति स्वंदेहा मा पद ताल मस्तकः।

उस यज्ञ की कोई मुदिमी नहीं है। सर्वज्ञ. किरणें क्षैतिज, लंबवत और नीचे की ओर विकीर्ण होती हैं।

20. तस्य मधे वह्नि शिखा अनी योर्ध्व व्यवस्थितः।

इसके मध्य में अग्निशिखा अर्थात ज्वाला विद्यमान है।

21. नील तोयदमाध्यस्थ द्विद्युयुल्लेखेन भस्वरा।।

काले बादलों के बीच से चमकती हुई बिजली की छड़ की तरह चमकती है

22. निवार शुका वतनवि पीता भास्वत्त्व नुपमा ।

गलफड़े जितने पतले होते हैं उतने ही पतले और पीले-हरे रंग के होते हैं और केवल केन्द्रक ही (भोजन) अच्छी तरह से खाता है।

23. तस्य शिखाय मधे परमात्मा व्यवस्थितः।

परमात्मा उस यज्ञ ज्वाला के मध्य में है। इसका मतलब यह है कि इन जीवित चीजों का मतलब है कि ईश्वर जीवित प्राणी यानी इंसान में मौजूद है।

24. स ब्र्ह्मा स शिव स स हरिसेन्द्र सशोक्षरः परमस्वरत

वह ब्र्ह्मा है, वह शिव है, वह हरि है, वह इंद्र है, वह अक्षर (अविनाशी) परब्र्ह्म, सर्व सम्राट है।

25. राजाधिराजाय प्रसह्यसहिने

नमो वयं य श्रवणाय कूर्महे

स मे कामंकामा कामाय मह्यं

कामेश्वरो य श्रवणो ददातु

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः?

आत्मावलोकन करने वाले ऐसे राजधि राजा नारायण को हम प्रणाम करते हैं। जैसे ही हम आत्म-ज्ञान प्राप्त करते हैं, वह हमारी इच्छा पूरी करें! भगवान कामेश्वर, वह परम आत्मा हमारे श्रवण को आशीर्वाद दें! परमात्मा के संबंध में हमने जो सुना है उसकी पुष्टि करने के लिए हम महाराजाधिराज कुबेर को प्रणाम करते हैं।

26. ॐ तर्द्रह्म = ब्रह्म के समान

27. ॐ तदात्मा = वही आत्मा

28. ॐ तत्सत्य = वही सत्य

29. ॐ तत्सर्वम् = सब वही

30. ॐ तत्सुरोर्नमाः = पहले जैसा ही।

31. अन्तश्चरति भूतेषु गुहयाम विश्वमूर्तिसु।

वह सभी प्राणियों यानी जानवरों में निवास करता है। वही सब शरीरों में है और वही गुफा में है। (गुहा का अर्थ अब तक वर्णित कमल की कली के बीच का आकाश है। यह केवल संकीर्ण है। इसे दहरकाश कहा जाता है)।

33. त्वं यज्ञस्त्यं वशत्कारा स्यमिन्द्रस्त्यम

स्द्रस्त्यं विष्णुस्त्यं ब्रह्मत्यं प्रजापतिः ।

वह यज्ञ स्वरूप है, वह यग्नेस्वरूप उच्चारित वषट है, वह इंद्र है, वह स्द्र है, वह शिव है, वह विष्णु है, वह ब्रह्मा है, वह प्रजापति है।

34. त्वं तदा अपोज्योति रसोमृत।

ब्रह्मा भूर्भु वसुवरोम ।।

वही जल है। जल की चमक है, वही बिजली है, वही स्वाद है, वही अमृत है, वही ब्रह्म है। वह समस्त विश्व है।

35. ईशाना सर्व विद्यानं ईश्वर ।

सर्व भूतानां ब्र्ह्माधिपतिः ।।

ब्र्ह्मदेवः ब्र्ह्मा शिवमे अस्तु सदाशिवम।।

समस्त विद्याओं के स्वामी। वह सभी प्राणियों का भगवान है। वे वेदों के संरक्षक हैं। वह भगवान ब्र्ह्मा के मुखिया हैं। ऐसे ब्र्ह्मा मुझ पर कृपा करें! मैं सदाशिव हूं।

36. तद्विष्टोः परं पद्गं सदापश्यन्ति सूर्याः

दिविव चक्षुरातम् तद्वि प्रसो विपन्याओ

जाग्रिदं सस्सामिन्धते विष्णोर्यत्परं पदम्।

मानो आकाश में फैली हुई किसी ज्योति को देखकर विद्वान लोग सदापरम शब्द का उच्चारण कर रहे हों। ऐसे पंडित कठिनाई से रहित, सतर्क और विष्णुपद को प्राप्त करने वाले होते हैं।

37. ऋतुग्म सत्यं परमब्र्ह्म पुरुषं कृष्ण पिंगलम ।

ऊर्ध्वरेथं विरुपक्षं विश्वरूपाय य नमोनमः ।।

ऐसे सत्य स्वरूप, परब्र्ह्म, पुरुष, कृष्णवर्ण, पिंगलवर्ण, ऊर्ध्वरेतस्कु, विरुपाक्ष, ऐसे विश्वरूपन को नमस्कार है।

38. नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदय।

आइये जानते हैं नारायण यानि आत्मा। आइए हम वासुदेव अर्थात आत्मा का ध्यान करें। तो विष्णु हमें ध्यान की ओर ले जाएं! आपका ध्यान करें। मंत्रपुष्पम् का अर्थ है हमें ध्यान की ओर ले जाने के लिए प्रार्थना करना। इसके अलावा, यह इच्छाएँ माँगना नहीं है, यह समझना है.. किसके लिए प्रार्थना करना? इसलिए, प्रार्थना करना कोई कम काम नहीं है। इसे व्यवहार में भी लाना चाहिए। इसका मतलब है वहां बैठकर कुछ देर ध्यान करना। थोड़ी देर के लिए सब कुछ भूल जाओ और भगवान की दृष्टि में

रहो। यह बिना किसी विचार के संभव है। उसके लिए 'श्वास पर ध्यान' करना चाहिए।

यदि कोई विचार नहीं है तो आपका ध्यान ईश्वर पर है। अगर हम एक मिनट भी ऐसा बिता सकें तो हमारा जीवन धन्य हो जाएगा। इसीलिए उत्तरगीता में

श्लो।। मीनुषं मिनिषार्धा वजन्निनो ध्यानचिन्ताय!
क्रतुकोटि सहस्रनाम ध्यानमेकं विशिष्टते!!

थाः- आत्मज्ञानी लोग यदि एक मिनट या आधा मिनट भी आत्म-ध्यान करें तो करोड़ों अनुष्ठानों का फल प्राप्त होगा। इसलिए अकेले ध्यान अद्वितीय है। अर्थात कोई कितना भी महान क्यों न हो, उत्तर गीता में स्वयं भगवान कहते हैं कि आधा मिनट नहीं, बल्कि एक मिनट भगवान का ध्यान करने से हजारों करोड़ कर्मों का फल प्राप्त होता है। इसलिए यह मंत्रपुष्प का पाठ करने और फूल चढ़ाकर मनोकामना मांगने की बात नहीं है। इसे व्यवहार में लाने से बिना मांगे ही परिणाम मिल जाता है. ध्यान करें. ध्यान करना ही नेक पुण्य का कार्य है। मंत्र पुष्प का अर्थ यह जानना है कि ईश्वर महान है। तात्पर्य यह है कि परमेश्वर पर ध्यान करना जानना चाहिए।

ब्रह्मर्षि पत्री जी के सत्य वचन-1

1) 'बीज में वृक्ष है - ध्यान में सब कुछ है!'।
2) 'जीवन ईश्वर है और शरीर मंदिर है!'
3) 'हमेशा वर्तमान में जियो!'
4) 'बलिदान अमरता लाता है!'
5) 'हम अपनी वास्तविकताओं के एजेंट हैं!'
6) 'यदि अतीत टूट गया है, तो वर्तमान टूट जाएगा!'
7) 'ध्यान के माध्यम से ही संकल्प शक्ति'
8) दान ही धर्म है- धर्म ही पुण्य है।
9) 'इस जन्म को अपना अंतिम जन्म बनाओ!'
10) 'हमने अपना जन्म चुना है!'
11) 'ध्यान सभी ज्ञान का मूल है!'
12) ध्यान के माध्यम से दिव्य ज्ञान का आलोक!
13) 'आत्म-ज्ञान के माध्यम से दुनिया तक पहुँच!'
14) 'मुंह के शब्द माथे पर लिखे गए हैं!'
15) 'हिंसा को छोड़ दिया जाए तो मनुष्य हंस है, ईश्वर है!'
16) हिंसा परमो धर्म है !
17) 'सभी प्राणियों के साथ मित्रता बुद्धत्व है!'
18) 'ध्यान ज्ञान है - ज्ञान मुक्ति है!'
19) 'किसी बात पर श्रद्धा होगी वैसा ही ज्ञान मिलेगा।
20) जीवन में हर किसी का लक्ष्य नर नारायण बनना है!
21) यदि आप शास्त्र पढ़ते हैं, तो आप विद्वान बनेंगे। यदि आप ध्यान करेंगे, तो आप ऋषि बनेंगे।
22) 'दूसरों की बुराई करना पाप है। - दूसरों की भलाई करना पुण्य है।'
23) 'दूसरों का अपकान करना पाप है। दूसरों का उपकार करना पुण्य है। अपने खुद का उपकार करना मोक्ष है।'
24) 'असफलता सफलता की सीढी है!'

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का हिन्दी किताब

1) आत्म शास्त्र । Rs.200/-
2) ध्यान विद्या । Rs.160/-
3) भगवद् गीता का सार । Rs.160/-
4) एक और जन्म । Rs.160/-
5) सत्य मार्ग । Rs.160/-
6) 'गाइडिंग' ध्यान क्यों नहीं ? Rs.120/-
7) भगवान कौन हैं। Rs.120/-
8) कर्म सिद्धांत । Rs.120/-
9) विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ Rs.120/-
10) मरने से पहले मरना है। Rs.130/-
11) ब्रह्म ज्ञान। Rs.100/-
12) यह जीवन क्यों हैं ? Rs.100/-
13) दुख निवारण का मार्ग Rs.75/-
14) क्या हम इस लोक के वासी हैं
या परलोक के वासी हैं? Rs.50/-

For Books Please Contact :

TATAVARTHI VEERA RAGHAVARAO

BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

संसार में अनेक विज्ञान हैं। लगभग हर कोई विज्ञान को मानक में लेता है।

विज्ञान के द्वारा हर चीज़ को शरीर पर लागू किया जा सकता है। आत्मा को भी इसे लागू किया जा सकता है। इसे शरीर पर लागू करने से एक तरह का अनुभव होता है। आत्मा पर लागू करने से एक और अर्थ समझा जा सकता है।

भगवान कृष्ण ने कहा, मेरी शरण में आओ, तो लोग ने उसे शरीर समझ लिया। वे मूर्ति की शरण लेते हैं और उसकी पूजा करते हैं। जो लोग उसे 'आत्मा' समझते हैं वे उसकी शरण लेते हैं और 'आत्मा' का ध्यान करते हैं। भगवान श्रीकृष्ण द्वारा कहे गए एक ही शब्द के कई अर्थ निकाले जा सकते हैं। लेकिन भगवान कृष्ण आत्मा की अवस्था में हैं, उन्होंने आत्मा की अवस्था में बात की।

साथ ही इन विज्ञानों को उनके स्तर के आधार पर अलग-अलग अर्थ भी दिए जाते हैं। तो आइए इन विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ का विश्लेषण करें।

Rs.120/-

तटवर्ती वीर राघवराव